रैदास परिचाई

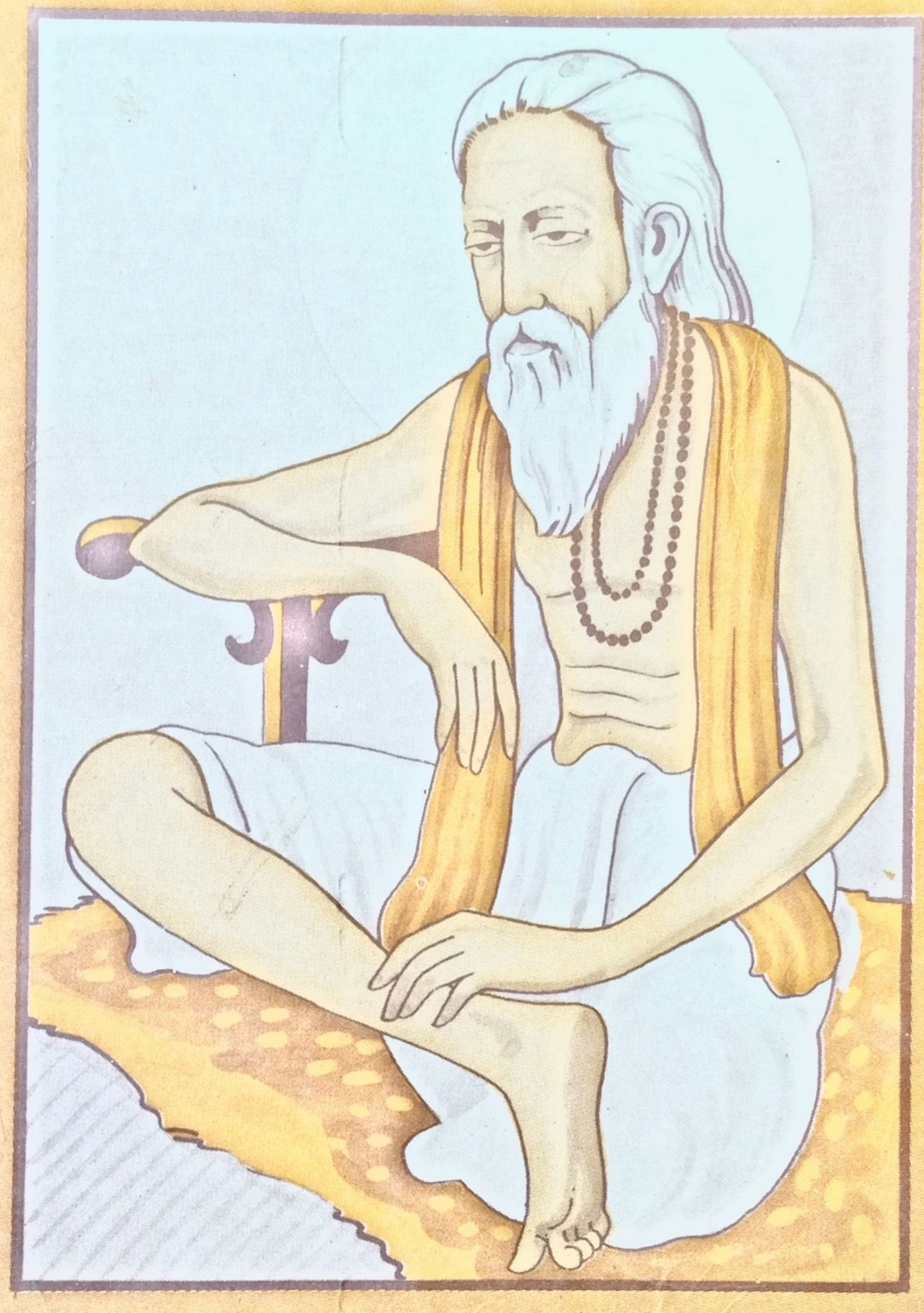

रैदास परिचई

सम्पादक

शुकदेव सिंह
प्रोफेसर, प्राचीन हिन्दी साहित्य
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

• रैदास परिचई
• कबीर रैदास गोष्ठी
• पद प्रसंग

© शुकदेव सिंह
फरवरी 6, 1993 ई०

प्रकाशक
विश्वविद्यालय प्रकाशन
विशालाक्षी भवन, चौक, वाराणसी

मुद्रक
वाराणसी एलेक्ट्रानिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०
वाराणसी - 221 001

भारत के महान् अवघड़ संत ब्रह्मलीन

बाबा भगवान राम

अवधूत

के

लिए

जो अब यहाँ वहाँ सर्वत्र हैं ।

क्रम

पृष्ठ

प्रस्तावना : 7-17

रचनाएँ :

- रैदास की परिचई : अनन्तदास वैष्णव 19-38
- कबीर-रैदास गोष्ठी : सेन नाई 39-54
- पद प्रसंग : नागरीदास 55
- रैदास परिचई का अंग्रेजी अनुवाद : 57-86

- रैदास के जीवन से सम्बद्ध तीन महत्त्वपूर्ण मध्यकालीन रचनाएँ

- **अंग्रेजी अनुवाद में सहयोग**
  जोजैफ सोलर-४, कैलफोर्निया, यू० एस० ए०

प्रस्तावना

आज रैदास सम्पूर्ण अनुसूचित समाज की जागरूकता और चरित्र बल के प्रतीक हो गये हैं । उन्होंने बिना किसी लज्जा और हीनता के अनुभव के बार-बार अपने जाति नाम के साथ अपना स्मरण किया और अपनी साधुता के द्वारा राजा, पुरोहित, रंक, फकीर—सबके पूज्य बन गये । उन्होंने काम करने वाले मजदूर, कलाकार हाथों को प्रतिष्ठा दी और मजदूरों की आमफहम भाषा को कविता के शिल्प के साथ विकसित किया । वे न केवल कबीर के समकालीन थे, सहधर्मी मित्र और बहुत दूर तक सजातीय थे । कबीर कोरी वंश में पैदा हुए, रैदास, धूसिया वंश में (दोनों शूद्र, चर्मकार, बैनजीवी एक ही जाति के दो वंश हैं) । कबीर के पूर्वजों ने तत्काल धर्म परिवर्तन किया था, इसके बावजूद उनका गहरा आत्मीय संबंध लहरतारा मंडुवाडीह के कुटवाडला धूसिया चमारों से बना हुआ था । शायद दोनों संत न केवल बनारस के खास इलाके में एक ही दलित जाति में पैदा हुए बल्कि एक निर्धारित नीति योजना के भीतर कविता और साधुता के माध्यम से सामाजिक विडंबनाओं को समाप्त करने के लिए संघर्षरत भी थे । दोनों संत अत्यन्त जनप्रिय थे और इनके अलग-अलग जनाधार बने । कबीर मुख्यतः शूद्र कोरियों, चमारों, धोबियों, दर्जियों तथा शूद्रोपरि कोइर, कँहार, कुर्मी, अहीरों यथास्थान जाटों और क्षत्रियों के बीच गुरु के रूप में स्थापित हुए । रैदास का मुख्य जनाधार चर्मकार, बढ़ई, तेली इत्यादि जातियों में रहा है लेकिन पंजाब और राजस्थान को छोड़कर यह जनाधार बीच में कई सौ वर्षों तक शिवनारायण से सम्बद्ध हो गया था । उत्तर प्रदेश और बिहार में तथाकथित चर्मकार जाति के गुरु और धर्म विश्वास मुख्य रूप से संत शिवनारायण से संबद्ध थे । निर्गुण-गान, गादी लगाना, कड़ाह-प्रसाद, भोज-भण्डारा—सब शिवनारायणी ही हुआ करता था । इधर जाति संबंधों के कारण उत्तर प्रदेश और बिहार के शिवनारायणी भी बहुत दूर तक अपने को रैदासी मानने लगे हैं । कबीर का जनाधार क्रमशः कम हुआ है । वह या तो मठों में केन्द्रित हैं अथवा मठ से संबंधित भगत, सेवक पंथियों में है । लेकिन पूरे उत्तर भारत में—असम से लेकर पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार में संत कबीर के हजारों मठ, लाखों अनुयायी, अनुगत और संत सेवी हैं । इनमें गुरु धर्मदास से संबंधित अनुयायियों की संख्या सर्वाधिक है । वे कबीर के प्रमुख शिष्य थे । भगवान् गोसाईं के भगताही पंथ के भी प्रायः 1200 मठ, हजारों साधु और लाखों शिष्य हैं । 'कबीरचौरा मूलगादी' की भी दो हजार के आसपास मठ-शाखाएँ बतायी जाती हैं । इनके भी बहुत अनुयायी हैं । जगन्नाथ दास के जग्गोदासी

अनुयायी भी काफी संख्या में हैं और परम शुद्धतावादी पारखी कबीरवादी भी लाखों की संख्या में हैं ।

आरंभ और वर्तमान के बीच कबीर और रैदास की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी पोथी-संस्कृति और गुरुमत से संबंधित है । प्रायः कर्मकाण्ड विरोधी, मूर्ति, मंदिर, शास्त्र और संस्कृत भाषा, शिखा और यज्ञोपवीत, जाति और वर्ण, छूत और अछूत अर्थात् हिन्दू शुचिता का विरोध करने वाले तमाम साधु सम्प्रदायों में कबीर रैदास और नामदेव अनिवार्य 'सबद विवेकी' के रूप में उपस्थित हैं । तमाम संत बानी संग्रहों, पंचबानी-संग्रहों और धरम-पोथियों, गुरु-ग्रंथ, सर्बंगी, दादू ग्रंथ, पंथप्रकाश, कुलजम स्वरूप जैसे दादूपंथी, दरियापंथी, प्रणामी, सतनामी, राधा स्वामी, सिख पंथ—सभी पंथों में संत रैदास और कबीर के या तो सीधे वचन गुरुवाणी के रूप में अंकित हैं या उन वचनों का सम्प्रदाय गुरु के वचन के रूप में अनुगम अनुवाद हुआ है । ऐसा लगता है कि कबीर और रैदास जीवन काल में ही लोकनायक और कथा पुरुष बनते हैं । अनेक तरह की चमत्कार कथाएँ हैं । लोकान्तर विश्वास, अन्याय से संघर्ष और जय, पुरोहित व्यवस्था का इन संतों के द्वारा दमन और फिर उनकी शक्ति के कारण परम पुरोहित विप्र के रूप में इनकी जन्मकथा और जीवन कथा का शूद्रान्तरण हो गया था ।

संतों के चरित्र से संबंधित तमाम तरह के संवाद, गोष्ठी, चरित, जनम साख, परची, परचयी, वार्ता, बात पोथी लिखने की एक परम्परा ही विकसित हो गयी । धर्म पोथियों में संतों की कविता के साथ वृत्तमूलक साहित्य का भी संपादन होने लगा । संत कबीर के समकालीन पीपा के पौत्र अनन्तदास ने संतों की आठ परचयियाँ लिखीं । संत नाभादास ने 'भक्तमाल' का सृजन किया जिसमें अजामिल, हरिवल्लभ, हनुमान, रंतिदेव, प्रह्लाद से लेकर कबीर, पीपा, धन्ना, सेन तथा अनेक परवर्ती प्रसिद्ध संतों की जीवनी और उनसे संबंधित अनुश्रुतियों और जनमिथकों का संग्रह हुआ । यह इतिहासपरक साहित्य अनुश्रुतियों के कवच में है और अनेक पाठ-पाठान्तरों से होता हुआ पुस्तकबद्ध हुआ है । मेरे मित्र विनान्त कैल्वर्ट (वेल्जियम) का कहना है कि ये श्रुतिमूलक कथाएँ—गोष्ठी, चरित, बोध, तिलक, माल, परची, जनमसाख इत्यादि पहले मौखिक परम्परा में थीं, संभवतः इनकी कविताएँ भी । बाद में इन्हें पुस्तकबद्ध किया गया और स्रोत की भिन्नता के कारण इनमें पाठान्तर उपलब्ध हुए । मेरा मन उनकी इस स्थापना से सहमत नहीं । लेकिन पदों या अनुश्रुतिमूलक साहित्य में जो पाठान्तर, पंक्ति क्रमभेद और विचलन हुए उनके कारणों के विधिवत विश्लेषण की आवश्यकता अनुभव करता हूँ । वैसे मुझे ऐसा लगता है कि तमाम हस्तलेखों में 'जैसा देखा वैसा लिखा', 'मम दोषो न दीयताम', 'साधु जनन से विनती मोरी, टूटल अच्छर लेब सब जोरी', 'इति श्री राम राम छ छ छ' की पुष्पिका और लिपिकर्ता भणिता के बावजूद सम्प्रदाय के दबाव और श्रुति और स्मृति के फल इन हस्तलेखों में पाये जाते हैं । परची ग्रंथों में या जीवनमूलक साहित्य में जो अन्तर है वह बहुत ही भ्रमात्मक

और अनेक प्रकार के जटिल प्रश्नों से संबद्ध है । 'कबीर रैदास गोष्ठी' और रैदास के पदों के साथ ही रैदास परचयी के विभिन्न पाठान्तरों का अध्ययन करते समय मुझे इस जटिलता का अनुभव हुआ । पाठ भेद केवल शब्द-भेद, शब्दांतर, शब्द-वर्तनी, पंक्ति की उपस्थिति-अनुपस्थिति से ही नहीं संबंधित हैं बल्कि पंक्तियों के क्रम में भी बहुत अराजकता है । लिखित परम्परा में प्राप्त तमाम पोथियाँ और रचनाएँ लिखित परम्परा से ही नहीं विकसित हुई हैं, मठों, आश्रमों, सम्प्रदायों तथा सबदजीवी गायकों,गोष्ठीकारों के द्वारा जो पाठ परिवर्तन किये गये उनकी भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है । लिपिकारों की अपनी लेखन-शैली रही है, वह लिपि, अक्षर, मात्रा के अंकन से ही नहीं संबंधित है बल्कि लिपिकार की अपनी लेखन-परम्पराओं तथा स्वयं की लेखन लतों से भी उसका संबंध है । देवनागरी महाजनी, तिरहुता, गुरुमुखी इत्यादि लिपियों के अपने अक्षररूप और वर्तन हैं । लिपिकार के स्थानीय उच्चारण भी उसमें कारण हैं । य, व, ज, ङ, ञ, ण, न, म, भ, क, फ, र, रु, रा, रेफ, र, ऋकल्पक अर, रि, इत्यादि की अंकन शैली भी भिन्न-भिन्न रही है । अनेक स्थानों पर य के नीचे चिह्न लगाकर खास उच्चारण अभिप्राय पूरे किये गये हैं । ष, स, श, के विषय में भी अलग-अलग लेखन नीतियाँ हैं । व्याकरणिक रूप से तीनों स के लिए 'स' (दन्त्य) का प्रचलन अधिक है । मूर्धन्य 'ष' प्रायः 'ख' के लिए आया है । शिरोरेखा के अभाव में प्रचलित 'ख' 'र व' हो जाता था इसलिए । क्ष, त्र, ज्ञ जैसे वर्ण भी तद्भवीकृत हैं । 'क्ष' का 'च्छ' विकल्प बहुप्रचलित है । कहीं-कहीं केवल 'छ' भी है । इस तरह संयुक्ताक्षर एकाक्षर हो गया है । 'त्र' कहीं 'तिर' है कहीं 'र्त' है और कहीं बहुत विचित्र रूप से अंकित है । उसे अनुमान और पुनरावृत्ति के गणित से पाठ्य अक्षर बनाया जाता है । 'ज्ञ', 'ग' और 'य' का संयुक्ताक्षर विकल्प बन गया है । मात्राएँ, ह्रस्व इ, दीर्घ ई, ह्रस्व उ, दीर्घ ऊ अर्थात् ये चारों स्वर मात्राएँ और स्वर वर्ण हस्तलेखों में कोई अंकन नियम नहीं बरतते । ह्रस्व-दीर्घ एक दूसरे के लिए आते रहते हैं । इसके साथ ही रचनाओं को अंगों, रागों, महला इत्यादि में वर्गीकृत करते समय अंग वर्गीकरण में निहित दर्शन और राग-रचना में निहित लय के दबाव के कारण भी पंक्तियों के क्रम, उसके नीचे ऊपर होने, कभी उसके निकल जाने के अवसर उपस्थित हो जाते हैं । मैंने अनुभव किया कि हिन्दी पाठालोचन का विश्लेषण अत्यन्त जटिल है और उसे पोस्टगेट और एस०एम० कत्रे, डॉ० माताप्रसाद गुप्त और मेरे जैसे लोगों के द्वारा स्वीकृत संकीर्ण-संबंध अथवा पाठ-परम्पराओं के तरीके से अन्तिम रूप नहीं दिया जा सकता । लेखन-गायन की परम्पराओं, अनुलेखन-क्षेत्रों, अनुलेखन-विधियों, तद्भवीकरण, यथावसर तत्समीकरण, त्रुटिसूची, क्षेपक और स्खलित का पूरा विवरण तैयार कर पाठ संपादन के नियम बनाने होंगे । दर्शन और सम्प्रदाय की सूक्ष्म जटिलताओं को समझे बिना तो इस तरह की सम्प्रदाय-पोथियों, वृत्त-कथाओं और निजन्धरों, लोकश्रुतियों को भी समझना कठिन है । इस तरह के तमाम

लोकाचार के रचनात्मक और विपक्षवेधी कारणों की मीमांसा किये बिना पाठ की निकटतम संभावनाओं तक नहीं जाया जा सकता । इस क्रम में मैक्सिकों के मेरे मित्र डेविड लॉरेन्जन, वेल्जियम के कैल्वर्ट, लन्दन के डॉक्टर पीटर फील्ड लैण्डर, बर्कले, अमेरिका के जोजेफ सोलर और सेरेक्यूज, न्यूयार्क स्टेट की रॉक्सिन गुप्ता ने मेरे साथ काम किया और मैंने उनके साथ काम किया । इसके अतिरिक्त भी रैदास ग्रंथावली के सम्पादन के क्रम में मैंने अनुभव किया कि पाठालोचन के साम्प्रदायिक, संगीतात्मक, दार्शनिक कारणों को भी अनुलेखन से जोड़ना पड़ेगा । इस क्रम में रैदास परचयी के लिए मैंने भण्डारकर प्रात्य शोध मंदिर पूना के बस्ता नं० 536/1895-98 से प्राप्त प्रति में प्राप्त रचनाओं के साथ इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी लन्दन, रेफरेन्स Mss हिन्दी /8/12, पुखराना राजस्थान की निरंजनी पोथी, साहित्य सम्मेलन की हस्तलेख संख्या 1376-2219 फिर जयपुर की हस्तलेख संख्या 1645, संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर के अतिरिक्त जयपुर की हस्तलेख संख्या 1843, 4642, 12422, 4633, 14741 का उपयोग किया साथ ही सेवादास की बानी, नागरी प्रचारिणी सभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के गुटका रामचरणदास में प्राप्त रैदास परिचयी को देखा । रैदास परचयी में प्राप्त प्रसंगों की प्रामाणिकता के लिए एक दूरारूढ़ पद्धति का भी प्रयोग करना पड़ा । इस क्रम में नाभादास के भक्तमाल की पद संख्या 56 की टीका 255-56-57-58-59-60-61, 262, 263, 264 का विधिवत अध्ययन करने के बाद नागरीदासकृत पद-प्रसंग से रैदास सम्बन्धी एक निजन्धर का मिलान किया । नागरी दास के पद-प्रसंग में 'आयो हो देवाधिदेव, तुम सरन आयो' पद के सम्बन्ध में नागरी दास ने जो कहा है उसकी पूर्व पुष्टि भक्तमाल में नाभादास के पद की टीका से होती है । टीका संख्या 263 की व्याख्या में भी 'आयो हो देवाधि तुम सरन आयो' पद का प्रसंग है अर्थात् रैदास के जीवन की एक-एक घटना और उनसे जुड़े हुए एक-एक पद के सम्बन्ध में साधु और चरितकार समाज में एक ही प्रकार की अनुश्रुतियाँ प्रचलित थीं । उनके चमत्कार के सम्बन्ध में जो ज़नविश्वास बन गये थे वे उनके जीवन काल में ही बनने लगे थे । इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि रविदास जी की मृत्यु 1597 विक्रमी में हुई और उनकी मृत्यु के 48 वर्ष बाद सम्वत् 1645 में जब अनन्तदास वैष्णव ने उनकी परचयी लिखी तबतक रैदास परम सिद्ध, संत, चमत्कारी, अनेक धर्म सम्प्रदायों के धर्म पुरुष, श्रेष्ठ कवि और परम महात्मा स्थापित हो चुके थे । उन्होंने अपनी मृत्यु के समय यह प्रमाणित कर दिया था कि वे पूर्वजन्म में विप्र थे । यह घटना या यह विश्वास अनन्तदास के रचनाकाल तक यानी रैदास जी के मरने के कुल 48 वर्षों बाद एक प्रसिद्ध जनविश्वास में बदल चका था । 'भक्ति-विजय' नामक ग्रंथ में भी रैदास के सम्बन्ध में जो अनुश्रुतियाँ हैं वे उनके चमत्कारी, तार्किक, ब्राह्मण ध्वंसक, परम विप्ररूप की ही पुष्टि करती हैं । इस प्रकार रैदास से संबंधित जो जनविश्वास है वे 'सोढी मेहरबान' के 'जनमसाख' में भी पाये जाते हैं । उनमें

भी चमत्कारों, तर्कों, लोकसिद्धि और ईश्वर-कृपा को लेकर तापस रैदास के बारे में वैसा ही कुछ लिखा गया है, प्रायः वही जो अनन्तदास की परचयी में है । इस प्रकार भक्ति-विजय, सोढी मेहरबान कृत 'जनमसाख', नाभादास की भक्तमाल, अनन्तदास की परचयी, नागरी दास का पद-प्रसंग अनेक ऐसे स्रोत ग्रंथ हैं जिनसे रैदास की एक छवि, एक निश्चित व्यक्तिता जो संदेह-ग्रंथि के खण्डन और संदेह-मुक्ति या सदेह मुक्ति के बीच बनी हुई है । इससे यह सिद्ध होता है कि रैदास अपने जीवन काल में ही तमाम तरह के लोक विश्वासों के प्रतीक बन गये थे । उनकी जीवन-गाथा को अनेक तरह से कहा-सुना गाया जाता था । जब अनन्तदास ने परचयी का अनुलेखन किया तो उसे भी पढ़ने गाने वालों ने अपने ढंग से नीचे ऊपर किया । संशोधनों और क्षेपकों की सहायता से रैदास के जीवन-वृत्त की रचनाशैली पर गंभीर ढंग से विचार किया जा सकता है । हमारा लोकमानस कैसे एक साधु संत को लेता है उसके लिए कैसे कथा-विश्वासों की रचना करता है यह बहुत दिलचस्प है । आकस्मिक नहीं है कि एक लिखी हुई रचना में पुनर्लेखन के क्रम में बहुत से परिवर्तन किये गये । लेकिन इन परिवर्तनों की धुरी निश्चित है और एक है । एक तरह से मूल जीवन-वृत्त को ध्यान में रखकर प्राचीन प्रति को प्रमाण मानकर 'रैदास परचयी' का संपादन संभव बनाया गया है ।

पाठान्तर की जटिलताओं की दृष्टि से पंक्तिक्रम, लुप्ति, अर्द्धाली अंश का आगम, प्रसंगान्तर, शब्द-परिवर्तन, अनुलेखन-भ्रम, शब्द-भ्रम—अनेक घटक और स्तर हैं जिनमें कुछ को उदाहृत किया जा सकता है ।

नगर वाराणासी उतिम गाउँ । पाप न नेरी करावै काउँ ।

संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर, प्रति 1645

नगर वाराणसी उतीमं गाऊँ । जहाँ पाप पुन्य न लागै काऊँ ।

पूना प्रति बस्तानं० 536/1895-98

नगर वानारसी उतिम ठामउँ । पाप न नीरौ आवै काऊँ ।

जयपुर प्रति 1843

नग्र बनारस उत्किम गाऊँ । पाप न नियरौ आवे काउँ ।

रामचन्द्र सैनी, वेलनगंज आगरा हस्तलेख : रैदास परचरी

नगर बनारसी उत्तम ठाऊँ । पापी पुनी नहीं कहाऊँ ।

इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लंदन
Mss हिन्दी A-12 हस्तलेख

ये अंतर सबसे अधिक प्रचिलत प्रथम पंक्ति में ही दिखायी पड़ते हैं । इस तरह के सारे अन्तरों को विस्तार पूर्वक जोजफ सोलर ने पंक्तिशः मिलाया था और इस आधार पर हम एक पाठ्यक्रम तालिका तैयार कर रहे थे । सामान्य

पाठक तक उसकी बहुत उपयोगिता नहीं है । केवल उससे यही निष्कर्ष निकलता है कि रैदास परचयी, परचरी, परची या कबीर रैदास गोष्ठी जैसी पुस्तकें मौखिक परम्परा में भी बहुत प्रचलित थीं । लिखते समय लिपिकार उसका भी उपयोग कर लेते थे । गाउँ, ठामउं, ठाउँ जैसे अन्तर बहुत साधारण हैं लेकिन इतनी स्पष्ट उक्तियों में लेखन विषयक अन्तर मौखिक परम्परा के अस्तित्व की सूचना देता है । एक और पंक्ति ली जा सकती है—

जौ तू रह्यो नगर मैं चाहे । तौ तूं जिनि काकूं कौ बाहे ।

जयपुर हस्तलेख संख्या 4642

जे तू रह्यो नग्र मै चाहै । तौ जिन कहू और हि बांहै ।

जयपुर हस्तलेख संख्या 12422

जे तू रह्यौ नग्र महि चाहि । तौ जिन काहू और हि बाहै ।

जयपुर हस्तलेख संख्या 8633

जौ तू रह्यौ नगर मह चाहै । तौ तू जिनि काहू को बाहै ।

संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर हस्तलेख संख्या 1645

जे तू रह्यौ नगर मैं चाहै । तो जिन कोइ औरहि बाहै ।

इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी, लंदन, हस्तलेख सं०
Mss /A-12

ये पाठान्तर भी अत्यन्त प्रसिद्ध पंक्ति के हैं, इनमें नगर, नग्र, काकू, काहू औरहिं, कोई औरहिं, काहू को जैसे शब्दान्तर सिद्ध करते हैं कि स्मृति के आधार पर अपनी व्याकरणिक प्रज्ञा के भीतर लिपिकार लेखन किया करते थे । इस तरह के पाठान्तर अत्यंत प्रसिद्ध, बहुपठित, वाचित पुस्तक-पाठों के साथ होता है । ऐसा लगता है कि संतों की महिमा के कारण परची और जनमसाख जैसे साहित्य की अनिवार्यता हो गयी थी । संतों के जनप्रभाव को देखकर मठ मन्दिर आश्रम के संस्थापकों ने इस तरह की चरित-गाथाओं का लेखन प्रारंभ किया । चौदहवी-पन्द्रहवीं शताब्दी में लोकप्रिय होने वाले तमाम संतों के जितने मठ और आश्रम बनते हैं, पोथी लिखने की जैसी परम्पराएँ विकसित होती हैं उससे यह स्पष्ट है कि जनता में चर्चित संतों, कवियों को श्रद्धा और संघर्ष की गाथाओं से सम्बद्ध किया जाने लगा । लगभग यह समय वही है जो अवतार कथाओं के काव्यानुवाद का समय है । क्या यह कम आश्चर्य की बात है कि जो नाथ सिद्ध और सूफी साखी, सबदी, सलोक, पद, चरचरी, प्राण-संकली इत्यादि के द्वारा अपने विचार संप्रेषित किया करते थे उन संतों के आश्रमों में बैठकर उनके शिष्यों ने ही 'चरित-काव्य' लिखना प्रारंभ किया ? सुदामा-चरित, ध्रुव-चरित हजारों की संख्या में मिलते हैं । अनेक भक्तों, सेउसमन, मोरध्वज इत्यादि की चरित-गाथाएँ बड़ी संख्या में लिखी गयी हैं । इसी समय कुछ आगे पीछे मुल्ला दाउद, जायसी, कुतुबन, मंझन, विष्णुदास इत्यादि मुसलमान-हिन्दू कवि संत बड़ी संख्या में आख्यान

काव्य लिख रहे थे । सूफियों के प्रेमाख्यान और विष्णुदास का रामाख्यान इस काल की कृतियाँ हैं । दोहा चौपाई बद्ध इन सारे आख्यानों और चरितों की काव्यसिद्ध परिणति 'रामचरित-मानस' में होती है । उसमें भी अनेक साधु-कथाएँ हैं, साधु-प्रसंग हैं । इस तरह ऐसा लगता है कि इस परम्परा के भीतर सहज भाव से पीपा के पुत्र के पुत्र अनंतदास वैष्णव ने आठ परचयियाँ लिख डालीं और ये मठों, आश्रमों, गोठों, चौपालों, सत्संग बैठकों में गायी-बजायी-सुनायी जाती थीं । यह सुखद संयोग है कि सम्वत् 1633 में 'रामचरित मानस' पूरा हुआ और सं० 1645 में अनन्तदास की 'रैदास-परचयी' । कुल बारह वर्ष का अन्तर है । इससे स्पष्ट है कि दोहा-चौपाईबद्ध चरित काव्य खूब लिखे जा रहे थे । कबीर रैदास इत्यादि का गुणगान देखकर ही तुलसीदास को कष्ट हुआ था और उन्होंने 'प्राकृत जन कीन्हें गुण गाना, सिर धुनि गिरा लगी पछताना' जैसी पंक्ति लिखी और यह संयोग है कि तुलसीदास की यह पंक्ति लिखी जाने के बाद हिन्दी में 'चरित-काव्य' लेखन की परम्परा धीरे-धीरे अप्रासंगिक और स्थगित हो जाती है । यह कैसा विचित्र योग है कि जिन संतों ने किसी का 'चरित' नहीं लिखा, 'चरित' और 'अवतार' को माया का खेल कहा उन संतों के ही चरित लिखे गये । उन्हें अवतार और देवत्व से सम्बद्ध किया गया । लेकिन जिस तुलसीदास ने राम का चरित लिखा उनका 'चरित' किसी ने नहीं लिखा । केवल भक्तमालों में वे वाल्मीकि के अनुवादक के रूप में स्मरण किये जाते हैं । इस तरह स्पष्ट है कि 'रैदास-परचयी' संत मतों में परिवर्तित काव्य-नीति का परिणाम है । यह काव्य-नीति धार्मिक, साम्प्रदायिक और सामाजिक संघर्ष के भीतर विकसित हुई और उसने एक निश्चित सामाजिक पक्ष बनाया । इस बात की लोकशास्त्रीय, ऐतिहासिक तथा नृवंश-शास्त्रीय मीमांसा होनी चाहिए । वे कौन-सी परिस्थितियाँ होती हैं जो एक कामगर शूद्र या दलित को साधु महात्मा की ऊँचाई तक उठाती हैं, वेदों, शास्त्रों, पुराणों अर्थात् स्थापित महत्ताओं के खण्डन का बल विकसित करती हैं और वे कौन सी परिस्थितियाँ होती हैं कि जब कोई प्रतिष्ठा के प्रकर्ष पर पहुँच जाता है तो उसे पुनः आश्रम, मन्दिर, पूजा, पाखण्ड, अवतार, विश्वास, चमत्कार—तमाम तरह के श्रद्धाकंचुक में आवृत्त कर लिया जाता है ? यह पूरी प्रक्रिया बहुत वर्तुल है, यथावसर तिर्यक और अपरीक्षणीय । वस्तुतः जब किसी जागरूक विचारक के व्यक्त विचार समाज-विचार में रूपान्तरित होने लगते हैं तो कर्मकाण्ड और पाखण्ड की संस्कृति खास तरह के छद्म के भीतर नमनशील और लचीली हो जाती है । वह हर श्रेष्ठ को अपने साँचे और ढाँचे के भीतर रूपान्तरित कर लेती है । यह बड़ी विचित्र बात है । कबीर संघर्ष करते-करते जब एक बहुत बड़ा लोकाधार बना लेते हैं तो हिन्दू और मुस्लिम दो हिस्सों में उनकी मृत्यु के दिन ही बँट जाते हैं । उन पर समाधि भी बनती है और रौजा भी । रैदास जीवन भर विप्र-संस्कृति से संघर्ष करते हैं । अनेक तालाब पोखरे बनवाते हैं, कुण्ड और कूप । जब उन्हें गंगा में स्नान नहीं करने दिया जाता तो कहते हैं कि 'मन चंगा

तो कठौती में गंगा' । लेकिन उसी रैदास के एक अधेले पर गंगा इस तरह रीझती है कि देव-निर्मित स्वर्ण-कंकण सौंप देती हैं । कठवत के पानी में गंगा का यह समर्पण लोकबल के कारण होता है । अपने संतों को कोई जाति इसी तरह महिमामंडित करती है । निश्चित रूप से इस जनाधार की दृष्टि से संत महात्मा और कवि अमूर्त, अदृश्य, देवोपम और मनुष्येतर बन जाते हैं । अपनी भारतीय जाति प्रायः लोकनायकों और प्रतिभापुंजों के साथ इसी तरह से मिथक रचती है । एक तरह से जनता अपनी पीड़ा को ही सम्मान और देवत्व में अतिक्रमित और उदात्तीकृत करती है । 'रैदास परचयी' या इस तरह के चरित-ग्रंथ पीड़ा और संघर्ष के उदात्तीकरण के प्रजातीय सृजन में प्रमाणित हैं । किसी जाति की रचनात्मकता को समझने के लिए उसके कलाबल का एक पटल उस जाति की किंवदन्तियाँ, अंध विश्वास, चमत्कार और श्रद्धा-प्रसंग भी होते हैं । यदि सत्य को गल्प के भीतर से निचोड़ना है तो लोक-मिथकों, चमत्कार-कथाओं और अवतार-कल्पनाओं से अधिक सुन्दर सामग्री अन्यत्र संभव नहीं है ।

रविदास के जीवनवृत्त को ठीक-ठीक समझने के लिए वर्ष और अनुमान की तिथियों का जितना महत्व है उससे अधिक एक दूसरी प्रक्रिया का भी है । यह नयी है इसलिए कुछ लोगों के लिए विस्मयकारक भी हो सकती है । जन्मान्तर कथाएँ सदैव लोकप्रिय नहीं रहतीं । बुद्धि, तर्क, आस्था और अन्धविश्वास का जातीय जीवन में अलग-अलग चक्र चलता रहता है । जैसे बुद्ध का स्वयं उदय पूर्वजन्म, ईश्वर-विश्वास, यज्ञ और पूजा के खण्डन का समय है । बुद्ध तर्क के साथ दुःख के निवारण के लिए संकल्पित थे । पाखण्ड, अति आस्था और अवतार-कल्पना का उन्होंने निषेध किया था । उन्होंने अपने शिष्यों से स्वयं का सच खोजने की कोशिश की बात की थी लेकिन उनके निधन के कुछ ही वर्षों बाद बुद्ध वचन को शास्त्र की श्रुति के रूप में लेकर सुत्त, विनय, अभिधान तीन पिटक बने । बौद्ध संगीति बुलायी गयी और पिटकों पर विचार हुआ । धीरे-धीरे बुद्ध बोधिसत्व हो गये और उनकी जन्मकथाएँ जातक-कथा के रूप में लिखी गयीं । जिस महावीर स्वामी से जैन धर्म का संचालन हुआ उसी धर्म में वे चौबीसवें अंक पर तीर्थंकर हुए । एक से खिसककर चौबीसवें अंक पर पहुँचे । लेकिन आजीवक संतों ने विपक्ष में रहते हुए लगातार इस तरह के पाखण्डों का विरोध किया । बौद्ध / जैन अवतार, पूर्वजन्म, बोधिसत्व-तीर्थंकर-विश्वास से आजीवक टकराये । सिद्धों नाथों पर आजीवकों का भी प्रभाव पड़ा होगा । दलित शूद्र श्रमिक के प्रति ममता और चरित्र की शुचिता के प्रति उपहास, साधना में डोम्बी और द्विजा को ललना, रसना, अवधूती के समान महत्ता—इस बात के प्रमाण हैं कि सिद्धों-नाथों के यहाँ अवतार-कल्पना नहीं है । बाद में गोरख-पंथ की रावल जोगी शाखा में सात जन्मों की जन्मान्तर कथाएँ नये सिरे से प्रचलित हुईं । यह समय तेरहवीं शताब्दी का हो सकता है । जब नाथपंथी जीविका के लिए धर्मच्युत और साधुच्युत हुए तो उन्होंने गोपीचन्द भरथरी की जन्मान्तर कथाएँ

रच डालीं । जीवन और जीविका के दबाव से ऐसा हुआ । हठयोग, तंत्र-मंत्र, जन्मान्तर कथा, जोगियों के अपने माध्यम थे, सारंगी उनका वाद्य था । संतों ने सिद्धों नाथों से विचार और चिंतन का दायित्व तो लिया लेकिन अवतार-कल्पना, जन्मान्तर-विश्वास इत्यादि का खण्डन किया । कबीर ने स्पष्ट ही 'बीजक' में इसे मायाकृत कहा है । लीला नायकों की खूब मखौल उड़ायी है । इससे स्पष्ट है कि रावल जोगियों की जन्मान्तर कथाओं का संतों ने प्रत्याख्यान किया, हठयोग, मुद्रा, मांस, मैथुन—जोगियों के जीवन से जुड़ी हुई तमाम जीवन-चर्याओं को संतों ने अस्वीकार किया । नाथ सिद्धों से संतों ने मूर्ति, मंदिर, शास्त्र, संस्कृत का विरोध रिक्थक्रम में प्राप्त किया लेकिन हठयोग, तंत्र-मंत्र, अभिचार और जन्मान्तर कथाओं का बहिष्कार भी किया । पंडित रामविलास शर्मा को इकहरा दिखायी पड़ता है इसलिए वे यह मानते हैं कि संतों ने नाथ सिद्धों का केवल विरोध किया और इसी आधार पर पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी की स्थापना का खण्डन करते हैं क्योंकि पंडित जी यह मानते हैं कि संतों का तर्कवाद या मूर्ति-मंदिर-शास्त्र-संस्कृत निषेध सिद्धों नाथों से आया । वास्तव में संतों ने विचार सिद्धों नाथों से लिया, आचार स्वयं का बनाया, जिसमें वैराग्य था लेकिन अशाकाहार, दुराचार का विरोध था । इसी क्रम में उन्होंने जन्मान्तर कथाओं को भी अस्वीकार किया । जन्मान्तर कथाएँ या कथावृत्त दोहा-चौपाई शैली की धर्म-कथाएँ संत परम्परा में कबीर-रैदास के निधन के पचास-साठ साल बाद प्रारंभ हुईं । स्वयंभू से लेकर हरिषेण तक जैन कवियों के द्वारा प्रबंध लिखने की जो परम्परा थी वह सूफी शेख फरीद, संत नामदेव, कबीर, रैदास, धन्ना के समय अनुपस्थित है । प्रायः दो ढाई वर्षों की यह अनुपस्थिति महत्त्वपूर्ण है । इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि रैदास के मरने के कम से कम पचास वर्ष बाद 'चरित' लेखन की परम्परा नये सिरे से शुरू हुई । उसका एक प्रकर्ष विष्णुदास की रामकथा और तुलसीदास के रामचरितमानस में है, दूसरा परवर्ती प्रकर्ष अनन्त दास की 'परचयी', जन गोपाल के 'सुदामा चरित', 'ध्रुवचरित' और 'प्रह्लाद चरित' जैसे सैकड़ों चरित काव्यों में है । इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि संत रैदास का उद्‌भव 1433, 1455 इत्यादि विभिन्न विद्वानों के द्वारा निर्धारित तिथियों को न होकर प्रायः 1475 के आसपास हुआ होगा । इसका एक कारण यह भी है कि रैदास की कविताओं में कबीर, सधना और सेन के मरने का प्रसंग आया है । 'कबीर सधना सेन तरे' उक्ति से यही आशय निकलता है । इसके साथ ही न केवल 'रैदास परचयी' में बल्कि रैदास के समकालीन संत हुसैन नाई सेन के द्वारा लिखित कबीर-रैदास-गोष्ठी में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि रैदास कबीर के यहाँ उन्हें ब्रह्म ज्ञानी मानकर जाते थे । दोनों में गुरु भाई जैसा प्रेम था, तर्क करने की समतुल्यता थी, निकटता इतनी कि एक दूसरे को तुर्क और चमार कह सकते थे । लेकिन किसी तीसरे का हस्तक्षेप, चाहे ब्रह्मा, विष्णु, महेश, दुर्गा ही क्यों न हों, उन्हें स्वीकार नहीं था । इस संदर्भ को कबीर रैदास गोष्ठी में

देखा जा सकता है । अनन्तदास ने भी रैदास-परचयी में रैदास के साथ सारी सम्पन्नता, वैभव, साठ चँदोवे वाला महामठ जोड़कर यह दिखाया है कि संकट आने पर रैदास अपने गुरु भाई 'फटी चिथड़ी साथरिया' ओढ़ने वाले परम वैरागी जुलाहा कबीर से राय-परामर्श लिया करते थे । इसलिए रैदास की तर्कसंगत आयु संत कबीर से प्रायः बीस बरस कम करके ही आंकना उचित है । इसके लिए एक बात और मैं स्पष्ट करना चाहूँगा । संत कबीर के नाम से 'रमैनी' तो मिल जाती है, यह कुछ 'ज्ञान-तिलक' जैसा ग्रंथ है, लेकिन रैदास के नाम से एक 'प्रह्लाद-चरित' नामक रचना मिलती है । अर्थात् रैदास की वृद्धावस्था पहुँचते-पहुँचते 'चरित काव्यों' का संतों की दुनिया में प्रवेश होने लगा था । कबीर के समय तक यह वर्जित विषय था और इन्हीं चरित-काव्यों से एक ओर प्रेरणा लेकर दूसरी ओर इन्हीं चरित काव्यों की लोकप्रियता को अस्वीकार करने के लिए तुलसीदास ने 'रामचरित-मानस' लिखा । चरित काव्यों की रचनाधुरी के बीच-बीच में जो अन्तराल है उन अन्तरालों को जाति मन की निर्मिति, स्वीकार और निषेध के चक्र से जोड़ा जाय तो रैदास 1475 में उत्पन्न और 1597 में निर्वाण मंडित सिद्ध किये जा सकते हैं । यह समय विक्रम संवत का है । इनमें 57 वर्ष घटाकर ईस्वी सन् की तारीखें निश्चित की जा सकती हैं ।

चरित कथाओं—परचयी या भक्तमालों के काल को एक लोकप्रिय साहित्य रूप की प्रतिष्ठा देने के लिए मैंने रैदास के जीवन के अन्तिम वर्षों को चरित-काव्योदय का काल और विकास की दृष्टि से 50 वर्ष बाद का समय निर्धारित किया है । इसका कारण क्या है, यह प्रश्न उठाया जा सकता है । वस्तुतः मैं यह कहना चाहता हूँ कि जब चरित कथाएँ लोकप्रिय होती हैं तब जातीय जीवन में जन्मान्तर विश्वास, चमत्कार कथाओं का सृजन, पुरा मिथकों की पुनर्सृष्टि, विप्र ब्राह्मण वर्चस्व, मन्दिर मूर्ति और शास्त्रवाद का पुनरुत्थान जैसी शक्तियाँ पुँजीभूत होने लगती हैं । भारतीय जाति के नृवंशीय व्याकरण के भीतर से और रचनाकल्प की विभिन्न धुरियों के व्यूहन को ध्यान में रखकर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रैदास और कबीर की लोकप्रियता के कारण चमत्कार, विप्रता और देवत्व—इन संतों से जुड़ने लगे थे । यह जनरुचि में हुआ । इसी काल में कबीर को ब्राह्मणी पुत्र, रैदास को पूर्वजन्म का ब्रह्मचारी ब्राह्मण कहा गया । अनन्तदास की परचयी अर्थात् संवत् 1645 तक रैदास के आसपास इतनी जनश्रुतियाँ बन गयी थीं जिन्हें अनन्तदास की रैदास परचयी, भक्ति, विजय, भविष्यपुराण,. भक्तमाल, भक्तमाल की प्रियादास की टीका और नागरीदास के पद-प्रसंग तथा जनमसाख में आगे पीछे यथावसर यथारुचि संगृहीत किया गया । इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण रविदास की जन्म कथा है । मडुआडीह वाराणसी में वीर, विनायक, पीर और संतों की परम्परा में रैदास का जन्म होता है और उन्हें स्वामी रामानन्द से जोड़ दिया जाता है । यद्यपि स्वामी रामानन्द का रैदास ने अपनी रचनाओं में कहीं उल्लेख नहीं किया है लेकिन अपने निधन के 50 वर्ष बाद रैदास रामानन्द की शिष्य मंडली में

जनश्रद्धा के बल पर स्थापित कर दिये जाते हैं । उन्होंने बार-बार कहा है कि जिसने चारों वेदों का खण्डन किया, विप्र उसकी दण्डवत करते हैं । लेकिन मरने के 50 वर्ष बाद ही रैदास विप्र-कृपा और स्वयं को विप्र सिद्ध करने के लिए आकुल दिखायी पड़ने लगे हैं । वे अपना सीना चीरकर यज्ञोपवीत दिखा देते हैं और जन्म के काल में ही रामानन्द की कृपा से माँ का मुँह खोलने के लिए दूध पीते हैं । यह सवर्णता रैदास को अपनी साधु महिमा के कारण मिलती है । लोक-विश्वास आसानी से वर्णाश्रम व्यवस्था को तो नहीं जीत पाता लेकिन सशक्त को सवर्णता अवश्य दे देता है । इसी का एक दूसरा पक्ष चमत्कार है । पारसमणि जैसे प्रस्तर मिथक को रैदास ने अपनी कविता में कविता के उपाय के रूप में जरूर व्यवहृत किया है । लेकिन उसमें पारसमणि की यह कहानी नहीं है कि वह उन्हें दिया गया था लेकिन उसे उन्होंने छुआ नहीं । वे अपना दारिद्रय दूर करने के लिए अपनी राँपी और अपने मोची-कर्म पर ही विश्वास करते थे । सोने की मुहरों वाला प्रसंग भी इसी तरह का है । उनके तप के कारण सोना बरसने लगा लेकिन तप की महिमा को कम करने के लिए उन्हें रोज-रोज भगवत कृपा से मुहरे दी गयीं । झाली रानी उनके जीवन का इतिहास हैं, वह सच है । इसके अतिरिक्त सोने के कंकण वाली कहानी, अपना सीना चीर कर यज्ञोपवीत दिखाना उनके भीतर विप्रत्व की स्थापना के लिए है । अनन्तदास ने तमाम संतों के जीवन से संबंधित अति प्रचलित जनश्रुतियों को एकत्र किया है और ये जनश्रुतियाँ अन्य संत कथाओं में भी मिल जाती हैं । अर्थात् सोलहवीं शताब्दी में जनश्रुतियाँ, चरित-कथाएँ, चमत्कार-विश्वास, मन्दिर, ठाकुरबाड़ियाँ, संगीत, नृत्य, बड़े भवन अर्थात् रामचरितमानस, लाल किला और ताजमहल जैसी एक रचना-संस्कृति का निर्माण हुआ । अगर एक रानी की स्मृति में करोड़ों के संगमरमर चढ़ गये तो एक संत के ऊपर कुछ सामंत तोषी सवर्ण कथाएँ चढ़ गयीं तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है । इससे इतना ही सिद्ध होता है कि रैदास महान संत थे ।

शुकदेव सिंह

कबीर-विवेक
171-B, ब्रिजइन्क्लेव
सुन्दरपुर, वाराणसी - 5

रैदास की परिचई

रचयिता

अनंतदास वैष्णव

संवत् १६४५

रैदास की परिचई

नगर बनारसी उत्तम ठाऊं, पापी पुनी नहीं कहांऊं ।
मरैस कोई नरकि न जाई, संकर नाँव सुनावै आई ।।१।।

श्रुति स्मृति कोहै अधिकारु, तहां रैदास लीयो अवतारु ।
साकत कै घर जन्मयौ आई, जाति चमार पिता अरु भाई ।।२।।

पूरब जन्म सो बांभन होता, मांस न छाड्यो हरि जन सोता ।
इन अपराध नीच घर दीन्हां,पहला जन्म नीन्हिं[1] करि लीन्हां ।।३।।

दूध न पीवै रुदन कराई, अैसें देषि कुटंब डराई ।
कलपत कलपत बेटौ जायौ, बैडै[2] के भवन अजायौ जायौ ।।४।।

मंगलगीत न कांमन गांवै, दुचिते भऐ बाजा न बजावैं ।
बैद नावती[3] ले ले आवैं । जंत्र मंत्र वोषदी[4] करावैं ।।५।।

बालक मरत राषि ले कोई, हमारै जांनि धननंतर सोई ।
जो फुरमावौ सोई करि हैं, बहौत दरब ले आगैं धरिहैं ।।६।।

अैसी भांति रहे दिन च्यारी, बहौत अंदोह करै महतारी ।
कुटंब सहत पिता दुष पावै, रैदास निजम् मरिबौ भावै ।।७।।

जीबा तै मरिबौं है नीकौ, हरि तै बिमुष जीवन फीकौ ।
हरि हंस बिचारै सो जन जीवै[5], जम पै बिघन करावै ग्रीवै ।।८।।

कहा दालद्री कहा धनवंतू, कहा दुरबल कहा मैंमंतू[6] ।
कहा पंडित कहा मूरिष करई, हरि बिन राजा रंक न तिरई ।।९।।

अरध रात्री भई आकासां बांनी, सो रांमांनंद लीन्हा जानी ।
चमार के घर बेटौ जायौ, सो मेरो जन औतरि आयौ ।।१०।।

हरि सब कथा कही समझाई, जो पीछैं होती आई ।।११।।

कृपावंत हू दछ्या[7] देहू, बालक मरत राषि तुम लेहू ।
तब रांमांनंद कीयौ बिचारु, समझायौ है सब परवारु ।।१२।।

---

१. चीन्हि ?, २. बैडै ?, ३. नावति = भोंपा (ओझइत),
४. वोषदी = ओषधि = दवा, ५. ग्रीवै = गला,
६. मैंमंतू = मदमस्त = शक्तिशाली, ७. दछया = दीक्षा

जो तुम भगत होहु रे भाई, तो हरि बालक लेह जिवाई ।
तब चमरा उठि लागो पाई, मन मानैं सु करिहु गुंसाई ।।१३।।

तब रामानंद गहरन[1] कीन्हा, माथै हाथ सबन कै दीन्हा ।
माला तिलक भद्र कराया, पिछवा बासन सब करवाया ।।१४।।

तब ही कोरा कलस मंगाया, सबै ही भाव भगति मैं आया ।
सबहन[2] कै मन भयौ हूलासू, असतन पांन करै रैदासू ।।१५।।

देह बधाई बजै बाजा, घर-घर मंगल सदा बिराजा ।

दोहा

जनम सुनंत रैदास कौ, सुष पावैत भगवंत ।
करम का बंधन सब कटै, गावै दास अनंत ।।१।।

विश्रां - २

हहि बिधि हरि भगतन अधिकारी, जुगि जुगि जन की बिपति निवारी ।
दिन दिन हिरदै हरि बिसवासू, दिन-दिन बडौ भयौ रैदासू ।।१।।

बरस सात कौ भयौ है जबही, नौधा भगति दिढाई तबही ।
हरि भगतन की सेवा करै, सतगुर कही न सीष टरै ।।२।।

समां सात औसी बिधि ठा गईया, बहुत प्रीति केसौ सूं भईया ।
बारां तन मैं कहीयत नीकौ, सब कुटंब ही लागत फीकौ ।।३।।

बड़ौ भयौ तब न्यारौ कीन्हौं, बांटै आयौ बांटि धन दीन्हौं ।
राष्यौ वाषर के पछिवारै, कछु न कह्यौ रैदास बिचारौ ।।४।।

सीधा चांम मोलि ले आवै, तिनकी पनही अधिक बनावै ।
टूटा फाटा जर्बा जोरे, मसकत कौ काहू न निहोरे ।।५।।

अैसे लाभ सहज मैं होई, ताकै करम लागै कोई ।
न्यारे मिंदर भोग ल गावै, तहां न कोई मधिम आवै ।।६।।

पूजा अरचा अधिक अचारु, जांनैं भगति रीति ब्यौहारु ।
बरष पांच इसी बिधि गईया, कसनी बहुत सरीर ही भईया ।।७।।

१. गहरन = ग्रहण, २. सबहन = सभी

तब हरि भगत रुप करि आये, जन रैदास बहुत मन भाये ।
आदर करि आसन बैठारे, दीन बचन करि चरन पछारे ।।८।।

घड़ी एक हरि की कथा चलाई, ता पीछैं जिबनार बनाई ।
भोजन करि हरि बैठे जबही, दुष सुष कथा चलाई तबही ।।६।।

कह रैदास आपनो मरमूं, कैसैं रहै तुम्हारौ धरमूं ।
संपति कछू न देषूं नैना, कैसें देही पावै चैंना ।।१०।।

तब रैदास कहै समझाई, संपति मेरै राघौराई ।
कोटिक लक्ष्मी ताके चरनां, दुष दलदर नहीं ता सरनां ।।११।।

इतनी कथा कही रैदासू, केसौ के मन भयौ हुलासू ।
सुनि रैदास बचन इक मोरा, अबही दालदर मेटौं तोरा ।।१२।।

बारापन कौं हूं बैरागी, ग्यांनपाई करि माया त्यागी ।
फिरत फिरत हूं तेरे आयौ, कालिह बाट में पारस पायौ ।।१३।।

कृपा करौ तौ तुमहीं लेहू, मेरै कांम न आवै एहू ।
लोहा जे पारस कूं भेटै, कंचन होत न कोई मेटे ।।१४।।

अैस कंचन करि करि लेहू, मन मांनैं ता कूं ले देहू ।
वा का दोष न लागै कोई, दूणी भगति सहज मैं होई ।।१५।।

दोहा

बचन सुन भगवंत का, मौन गहै रैदास ।
कै सत देषन आईयौ, कै करन भगति कौ नास ।।

विश्रां - ३

घरी एक रैदास न बोल्या, हरि जी गांठि तैं पारस षोल्या ।
तुम जिन जांनो डह कै मोही, निहचै की यां देत हूं तोही ।।१।।

ऐ देषौ पारस के चीन्हां, सूई पकरि ले सोना कीन्हां ।
औसैं काहू होई न आंनूं, या मैं नांही जांन बिजांनूं[1] ।।२।।

तब रैदास बोलीयो बैना, यह न कबहूं देषौं नैंना ।
कनक कांमनी न देषै साधू, हाथा लियां लगे अपराधू ।।३।।

१. जांन बिजांनू = ज्ञान-विज्ञान ।

जौ कंचन सूं सीजैं[1] काजू, तौ राजा क्यूं छोड़ै राजू ।
भिष्या मांगि र भोजन करही, कंनक कांमनी तें नित डरही ।।४।।

ताकौ संग्रै कै सें कीजै, सत छाड़ि के ते दिन जीजै ।
तब हरि बोलै सुनि सति भाऊं, कंचन दोस न दीजै काऊ ।।५।।

कंचन के मंदिर बैकूंठा, कंचन हरि पहरत है कंठा ।
कंचन की द्वारिका बिराजै, कंचन सब देव कै साजै ।।६।।

कंचन भंजन हरि की सेवा, कंचन देयौ सुदांमइ देवा ।
कंचन क्रश्न प्रीति करि दीजै, कंचन काटि महोछा[2] कीजै ।।७।।

कंचन ले बैकुंठ बसावै, जो कंचन के मरमहिं पावै ।
कंचन षरचि पाप जो कीजै, तौ कत दोस कंचनहिं दीजै ।।८।।

कंचन ले गनिका[3] कूं दे ही, नरकि बिसाहि आप कूं लेही ।
कंचन ले जे जूवा षेलै, तौ क्यूं जन्म ऐक मै ठेलै ।।९।।

कंचन ले कलाल के जाई, सुरा पांन पी नरकि पराई ।
कंचन दे जौ आमिष षाई, सहजै नरकि आप जौ जाई ।।१०।।

कंचन दे मांनस मरावै, तौ गति मोषि कहां तैं पावै ।
कंचन दे त्रीया राचै, तब तैं मरीयै कहूं न बांचै ।।११।।

कंचन की अकोर जौ लेई, अपराधी कूं आदर देई ।
कंचन घरै धरनि दुराई, औरहिं देइ न आप न षाई ।।१२।।

तौ कंचन कैसैं निसतारे, देषत जन्म आपनौ हारै ।
ऐसी बात कही हरि जबही, जन रैदास बोल्यो तबही ।।१३।।

काहे हाथ हमारै धरि हूं, क्यौं न महोछा तुमही करहूं ।
हमही भयौ तुम ऊपर भाऊ, अब रैदास मन न डलाऊ ।।१४।।

पारस ले पावन[4] परि धरीया, तब रैदास पिछौड़ा फिरीया ।।

दोहा

नांह कीए न छूटिए, तुठ्यौ[5] कंवलाकंत ।
सुष सागर हरि सरन है, गावै दास अनंत ।।

---

१. सीजै = सिद्ध हो, २. महोछा = महोत्सव, ३. गनिका = गणिका = रंडी,
४. पावन = पांवों पर, ५. तुठ्यौ = संतुष्ट हो गया = खुश हो गया ।

बोल्यौ जन रैदास बिचारी, हूं राषत हूं कांनि तुम्हारी ।
जे तुम टेक आपनी करिहू, तो बसतर बांधि छांनि मैं धरिहू ।।१।।

नांगै भूषै आवै काजा, लीज्यौ कठिन, कीज्यो लाजा ।
केसौ पारस धरीयौ बांधी, घर भीतरि डांडै की सांधी ।।२।।

हम देषत यह षरौ लजाई, पाछैं कंचन करि करि षाई ।
यहु बिचारि करि केसौ गईया, बरस एक पारस कूं भईया ।।३।।

जन रैदास न देष्यौ काहू, मास तेहरेवैं बहूरयौं आहू ।
कहि स्वामी तुम ह काठिन लीनौ,कौंन दोस पारस कूं दीन्हौं ।।४।।

तब रैदास कहै कर जोरै, मैं छाड़यौ पाथर कै भौरै ।
पारस मेरै हरि कौ नांमूं, पाथर सू कछु नांही कांमूं ।।५।।

जा सूं पलटै तन मन प्रांनू, काटै करम सति सौ जांनूं ।
हरि पारस कंचन की रासी, और सकल माया की पासी ।।६।।

अंगीकर रैदास न कीन्हा, तब हरि अपनां पारस लीन्हा ।
लै पारस रम गए मुरारी, बहुरयौं केसौ बुधि बिचारी ।।७।।

सुपनंतर मैं बिनती करिही, मोहर पांच संपट मैं धरिही ।
ले कनक जिनि करिहू कुभाऊ,पूजौ साध हिरदै धरि भाऊ ।।८।।

इतनी कहत भयो सुष भारी, मांने बचन सु कहे मुरारी ।
भोर भए जो देषै जागी, दीन्ही संपति मैं कदि मांगी ।।९।।

तब तैं पांच पांच दिन पावै, ते सब पाक महोछौ लावै ।
मिंदर महल केए बहौतेरा, जहां तहां भगतन का डेरा ।।१०।।

कहैं कथा कीरतन सारु, आंन धरम नांही पैसारु ।
नगर का लोक दरसन करि जाहीं, तिन सूं बांभन षरा रिसांहीं ।।११।।

काहू को धन पायौं डारौ, षाई न जांनैं मूंढ गंवारौ ।
ढचरि करै लोगन बौरावै, सूद्र आपनी पूजा लावै ।।१२।।

सीष दैंन कूं नाहीं कोई, बहुत अनीत नगर मैं होई ।
मधम कुल अरु मधिम कांमू, मधिम कुटंब अरु मधिम धामूं ।।१३।।

मधिम आपन मधिम नांम, सो क्यौं पूजै सालगरांम ।
बेद पुरान कहै समझाई, सूद्र म्याला, न छूई जाई ।।१४।।

ऐसे बांभन कोप करांहीं, तब रैदासहि बरजन जांहीं ।
जे तूं रह्यौ नगर मैं चाहै, तो जिन कोई औरहिं बाहै ।।१५।।

सुधै समृत ले हरि (ग) नांमूं, तू जिन पूजै सालिगरांमूं ।
बरजत तिनैं नगर कौ राजा, ताकी बांभन करै न लाजा ।।१६।।

दोहा

रजनीत मानै नहीं, बहौत भरे अहंकार ।
बांभन बरजे ना रहौं, मरन करै दरबार ।।४।।

विश्रां - ५

दूबे तिबे चौबे आए, व्यास आचारज पाठिग ध्याये ।
बाला बूढ़ा सबै सकेला, करै बाद रैदास अकेला ।।१।।

बैठे जहां बाघेलौ राई, तिन कै राजनीति होइ आई ।
सगरौ लोग तमासै आयौ, दांन दीयां बिन कोतग पायौ ।।२।।

भोमीयां पांच सात मिलि बरजै, संक न मांनै बाभन गरजें ।
तब रैदास बाहिरौ आयौ, राज परजां माथौ नायौ ।।३।।

बैठौ भौमि डलीचौ डारी, मानूं, चंद्रमा करी उजियारी ।
आसि पासि तारागण सोहै, भजन प्रताप बापरौ कौहै ।।४।।

नृमल बचन कहै रैदासू, कौन चूक तैं हमहिं तरासू ।
बांभन बोलैं सुनि रे सूदा, तैं क्यौं धर्म हमारा नींदा ।।५।।

हम गुर पूजि आहि सब केरे, लोक बचन मांनत हैं तेरे ।
तूं किन मानैं बात हमारी, तोहि पाप लागत है भारी ।।६।।

सालगरांमहि लावै हाथू, तब कांपत है श्री जगनाथू ।
जल असनांन करावै जबही, सुरा पांन डारयौ तबही ।।७।।

तुलछी चंदन अरपहि फूला, ताकौ दोष थाप की तूला ।
बाल भोग डारै जल आंसू, राज भोग मांनत गोंमासू ।।८।।

धूप दीप आरती कौ भाऊ, तातैं भलौ न मांनै काऊ ।
सुरति सुमृति की राषौ रीती, साधू जन हारि न जीती ।।९।।

औसे धरम कहा ले धरीयै, जातें नरक कुंड मैं परीयै ।
धरम तुम्हरौ कहीयैं ऐहू, सब काहू भात न देहू ।।१०।।

हरि सुमिरन हिरदै जिन टारौ, कलपत पांचू इंद्री मारौ ।
पर अपबाद करौ जिन काहू, हरषि हरषि हरि के गुन गाहू ।।११।।

इतनां बचन हमारौ मानौ, तो तुम भला आपनां जांनौ ।
तब रैदास कहै समझाई, तुम तैं भगति दूरि है भाई ।।१२।।

झूठे फल भीलनी के षाए, प्रीति जांनि हरि के मन भाए ।
ता तें पापहि हू न डराऊं, भयौ सुपवित्र नाराइन नांऊ ।।१३।।

बाभन बोलै सुनि रैदासा, तूं जिन करै मुक्ति की आसा ।
त्रेता सुड़[1] तपस्या करही, ताकै पातिग बांभन मरिही ।।१४।।

सो रुघना मारयौ बांनां, बांभन जीयौ सुड़ गऐ प्रांनां ।
तप तीरथ क़ी करुं न आसा, हम हरि सरनि कहै रैदासा ।।१५।।

हरि ग्वालनि की झूठन षाई, ऊंच-नीच की संक न काई ।
ता झूठन कूं ब्रह्मा आयौ, पाई नहीं कृष्न भरमायौ ।।१६।।
वेद भागवत बोलै साषी, साद अनंत कथा यूं भाषी ।।१७।।

दोहा

भगति पियारी राम की, मरम न जांनैं कोई ।
जिन जांनी ते उबरे, मारि न सके कोई ।।

विश्रां - ६

बांभन बोलैं नेक न डरही, केसो कांनि हमारी करही ।
भृग रिषी सुर मारीयो लाता, सोभा अधिक ता भई हरि गाता ।।१।।

परसरांम सब छत्री सिंधारा, राज हमैं दीयौ इकीस बारा ।
फुनि पांडौं कै हीयै न टरता, सहंस अठासी भोजन करता ।।२।।

तब रैदास कहै सुनि पांडे, लात मार के भए न चांडे ।
जानौ नहीं राज की रीति, तातैं भई बहू बिप्रीति ।।३।।

संहस आठासी सरयौ न काजा, सुपच के संष बजाइन बाजा ।
तुम्हारी पूजा कौ फल ऐहू, सेवा करत नरक तुम देहू ।।४।।

नघु राजा तुम नरक पठायौ, दीयौ सराप क्रष्न मुक्तायौ ।
फुनि दुरबासा गुरु तुम्हारा, हरि भगतन की सरन उबारा ।।५।।

---

१. सूद्र ।

इतनी सुनि बांभन परजरीया, जांनू बैसंदर मैं घृत परीया ।
सुरही सुकरी क्यूं होई, दूध बिचारि षात है सब कोई ।।६।।

गई न दुरगंध गगन मैं मछा, स्वांन मंजन कीऐ होई न अछा ।
हंस काग कैसैं इकसारी, कंचन काचम लेहू बिचारी ।।७।।

अलष पुरस सूं अंतर होई, लोक बेद कहै है सोई ।
इंद्रीजीति सूद्र जे होई, ता कौ पाँव न पूजै कोई ।।८।।

बांभन जौ भिष्टि होइ जाई, तो सब मांनौं राजा राई ।
इतनी सुनि रैदास रिसांनां, हरि परित्यागे राजा रांनां ।।६।।

दुरजोधन कौ कीयौ त्यागू, लीयौ बिदरघर सूवां सागू ।
नांहीं रांम तुम्हारे बांटै, सबकोई लै सिर कै काटै ।।१०।।

सालगरांम महि आनि बिराजू, लेहु बुलाई तुम्हारा साजू ।
जहां प्रीति तहां चलि जाई, औस मति रैदास उपाई ।।११।।

बांभन कहै बेग ले आऊ, जौ तेरै मन मैं सति भाऊ ।
तब रैदासहि उपजी लाजा, सिंघासन परि आइ बिराजा ।।१२।।

जो तुम चत्र भवन के राई, जन की गोद बैठि हौ आई ।
बांभन कहै आहि प्रभु मेरे, अहो ब्रह्मन देव हम तेरे ।।१३।।

करि है बेद धुनि दीरघ बांनी, तिनकी केसौ नैंक न मांनी ।
गाइत्री सुमरैं चित लाई, और धरम सब कीऐ सोई ।।१४।।

इत रैदास ऐक पद[१] लीनौ, सब दिन गयो भोग नहीं दीनो ।
साढी तीन पहर गई बीती, नां काहू की हारि न जीती ।।१५।।

दे पद भोग रहै रैदासू, प्रेम उमंगि जल ढारे आंसू ।
अैसी करनां देषी जबही, सालिगरांम गोद गए तबही ।।१६।।

जन रैदास रह्यौ उर लाई, राजा परजा कै मनि भाई ।
जै जै कार करै सब कोई, बांभन हारि चले मुँह गोई ।।१७।।

मुष न दिषांवैं घूंघट षोई, मांनू षट मांस ते जरीयां होई ।
जीत्यौ जन रैदास निगरबी, बांभन भऐ बिंजन की दरबी ।
जुगि-जुगि जिनि थापे भगवांनां, भगति प्रतापि अनंत बषांना ।।१८।।

---

१. यह पद है—'आयो आयो हो देवादिदेव तुम सरन आयो ।' नागरीदास पद प्रसंग पृष्ठ ३६१

दोहा

दास अनंत भगति करै, जाति पांति कुल षोइ ।
ऊंच-नीच हरि नां गिनैं,भगति कीयां बसि होइ ।।

विश्रां - ७

बरस पांच का अंतर भईया, बहुरि कथा चीतौरै गईया ।
झाली रांनी मति की सूरी, दांन धरम सतसंग गति पूरी ।।१।।

भोग सकल कीजत है जाकै, माला मंत्र नांहि गुर ताकै ।
सहजै उपजि भई मन अछ्या, हरषवंत होइ चाहै दछ्या ।।२।।

भगत ऐक पूछ्यौ अकुलाई, कापैं दछ्या लीजै जाई ।
तब ते भगत कहै उपदेसू, मन में ढुढ्यौ च्यारयूं देसू ।।३।।

बहौत भगत कहा कहू वषांनी, ऐदो भगत बताऊं रानी ।
कासी नगर बेगि चलि जाऊ, जो मेरे बचन हियत्याऊ ।।४।।

जाति जुलाहौ नांम कबीरु, मांनूं सुषदेव को आहि सरीरु ।
निरगुन ब्रह्म लीयौ पहचांनी, तापैं दछ्या लीजै रानी ।।५।।

और एक रैदास चमारा, जानूं नारद लीयौ अवतारा ।
सूद्र कहूं तौ आवै लाजा, दरसन कारन कलपैं राजा ।।६।।

पंडित मरम न जांनौं कोई, बिष्न कौ अंस औतरे दोई ।
झाली कै मनि आनंद भईया, बनारसी कूं डेरा दीया ।।७।।

बांभन संग चले मन जांनी, हम पै दछया लै है रानी ।
झाली बरजै बरबट जांहीं, ऐक दछया अर गंगा न्हांनी ।।८।।

दिनां बीस में कासी गईया, झाली जनां छै - गुपत पठइया ।
जाइ कबीरै देहु जनाई, झाली सिष हौंन कूं आई ।।६।।

तब कबीर मन उपजी लाजा, मेरै कांम न रांनी राजा ।
फाटी कंबरी वोढ़ी जबही, झाली आई पहूंची तबहीं ।।१०।।

देषे सब निरगुन बैरागी, जे बैठे है माया त्यागी ।
देषी परम कुटी साथरीया, तिन ऊपरी फाटी कांबरीयां ।।११।।

पूजा अरचा देवी न देवा, सहज समाधि लगावे सेवा ।
थाली गडवा दरब न चीरु, दुजे दिन कूं रहे न नीरु ।।१२।।

सादी सौंज देषी जब रांनी, फिरी पिछौंडी मनि पछितांनी ।
चलौ जहं रैदास चमारा, उनहूं कौ देषैं व्यौहारा ।।१३।

पटौंती तहां न लागी बारा, ऊंचे देषे पौलि पगारा ।
देषि दिवालौ भयौ आनंदू, तहां सदा बैठे गोविंदू ।।१४।।

ऊपरि साठि चंदवां तांना, अैसा सुष न देषै रांनां ।
सोनैं भांजन कनक कपाटा, बहुत सुगंध भरै है माता ।।१५।।

झालरि झांझ पषावज ताला, बरन बरन फूलन की माला ।
तब देषे स्वामी रैदासा, बहुत महंत दीसत हैं पासा ।।१६।।

उजल कपडौ सुंदर गाता, मुष तै निकसै सीतल बाता ।
गरब गयौ रांनी कौ जबही, कीए डंडोत भगतन सू सबही ।।१७।।

दोहा

चरन गहे रैदास कै, दीन्हौं मातै हाथ ।
रांनी के मन मांनीयौ, भयौ भगतन सूं साथ ।।

विश्रां - ८

पहली मरम जांन्या सोई, अैसी दछया लीजै गोई ।
बहुत दरब ले आई झाली, सो सब षरच्या घर कूं चाली ।।१।।

कौस पांच जब छोड्या नगरु, बहुरु यूं बांभन माड्यौ झगरु ।
सुनी परोहित लीन्हीं माला, बांभन कौप भऐ है काला ।।२।।

आगनि रूप मन उपजी रीसा, पाथर ले ले फोड़े सीसा ।
गही बाग रांनी पलटाई, बहुरु यूं कासी पहुंची आई ।।३।।

बांभन कोपैं देहि सरापू, निरफल हो ज्यौ तेरौ जापू ।
के ऊ पतरा भुयँ सूं मारैं, केउ जोरि जनेऊ डारैं ।।४।।

के ऊ बैठा धांमे सिकाहीं, के ऊं धरती परि परि जांहीं ।
के ऊ रांणी लोही छांटैं, के ऊ पांडै पौंचा काटैं ।।५।।

के ऊ दांत जीभ सूं मारै, देह आपनी कपरा फारैं ।
के ऊ बिस की गांठि चबाहीं, के ऊ दौरि दिवांनैं जांही ।।६।।

के ऊ पेट कटारी मारैं, के ऊ बसतर पावक जारैं ।
के ऊ लोही आहूत देही, के ऊ प्यासी नीर न लेही ।।७।।

मरन करैं हरिजन की पौरी, सुनत बघलौं आयौ दौरी ।
मकनां दे दे आई रांनी, तब झाली मन मैं पछितांनी ।।८।।

अब कै केसौ संकट राषै, बार - बार झाली यूं भाषै ।
भलौ करत बुरौ जे होई, तौ केसौं सूं बस नहीं कोई ।।६।।

सगरौ नगर तमासै आयौ, पहलौ परचौ कहि कहि समझायौ ।
मारै मरे न सीझै काजा, सुनौ निहाइत बरजै राजा ।।१०।।

निज हरि भगत सैंन कहै नाऊ, बांधू गढ़ तैं सो चलि आऊ ।
ताकौ कह्यौ न बांभन मांनैं, करैं मचल मरिबौ ठांनैं ।।११।।

भगत ऐक रैदास पठायौ, सो कबीर कूं बूझन ध्यायौ ।
बांभन पौरि हमारी मरिहैं, देह मति हम कैसें करिहैं ।।१२।।

कहै कबीर न मांनै सीषा, जिन षाई राजन की भीषा ।
ब्रह्मा सिषवै तउ न मांनैं, हमहिं तुमहिं कमीन करि जानैं ।।१३।।

सालिगरांमहि सौंपो न्याऊ, जौ तुम अपना पिंड छुड़ाऊ ।
जुगि - जुगि जन की बोलै साषी, जिन डरपै हरि लैहै राषी ।।१४।।

अैसी सीष कबीर पठाई, सो रैदास बहुत मन भाई ।
बांभन हठि करिहै अपघाता, ग्यांन ध्यांन की सुनैं न बाता ।।१५।।

तब रैदास कहै समझाई, केसौ कहै स मानौ भाई ।
सालिगरांमहि बिराजै आनी, औसी मति सबकै मनिमांनी ।।१६।।

दोहा

सगरौ झगरौ मिटि गयौ, सुमिरन लागे संत ।
सोई साची मनि मांनिए जो बौलै भगवंत ।।

विश्रां - ६

जोइ परपंच पहलौ भयौ, तैसौ बांभना औरुं थयौ ।
बेद मंत्र गाइत्री जापू, पहर सवा दोइ कीयौ बिलापू ।।१।।

इत हरि भगत सैन रैदासू, हरि गुन गावै ढारै आंसू ।
चढ़े बिवांन देवता आऐ, गंण गंधप ज्यूं अंबर छाऐ ।।२।।

बोल्या सालिगरांम बिचारी, सब सुनीयौ तुम नर अरु नारी ।
साचौ साचौ जन रैदासू, झूठा बांभन देह तरासू ।।३।।

तीन बार यूं बोल्यौ केसौ, तब सबहन कौ गयौ अंदेसौ ।
जैजै कार भयौ जग मांहीं, कौतिगहार सबै घर जांहीं ।।४।।

जुग जुग जीति भगत की भई, पहपि बरष गण गंधप पठई ।
बांभन चले जूवां सो हारी, ऊंचे कुल कूं आई गारी ।।५।।

चले षिसाने दूजे हारे, जांनूं भाई बहन कूं हाथ पसारे ।
एकादसीया दैव उठांही[1], ताकै दिन दिछया ली रांनी ।।६।।

पून्यूं के दिन झगरा भईया, झाली देस आपनै गईया ।
सांझ बार सैन रैदासा, चलि आए कबीर के पासा ।।७।।

आदर करि कबीर बैसारे, समाचार हम सुने तुमारे ।
करिहैं परसपर असतुति भाऊ, और भगत सब बंदै पांऊ ।।८।।

साचे हरि साचे हरि दासा, हरि सुमिरन तैं सब दुष नासा ।
ता पीछें कीरतन करही, भए निसंक न काहू डरही ।।६।।

अरध राति सुमिरन कूं लागे, तब बैरागी सोवत जागे ।
तीन्यूं भगता पौढ़ै तबही, दीयौ चत्रभुज दरस जबही ।।१०।

उठि रैदास परयो हरि चरनां, सैंन कहै हम तुमरे सरनां ।
कबीर बैठे दरसन पायौ, रुप चत्रभुज हिरदै समायौ ।।११।

कबीर कौ मन निरगुन राच्यौ, और मतौ सबही कौ कांचौ ।
इतनी सुनि रैदास रिसांनौ, निरगुन सुरगुन आषा करि जानौं ।।१२।

सुरगुन थापै सैंन रैदासा, कबीर कै मन निरगुन आसा ।
पहर सवा लग कथीयौ ग्यानूं, टीकै रह्यौ कबीर कौ ध्यानूं ।।१३।

निरगुन कथत भयौ मन थीरु, गुर समान अब थप्यों कबीरु ।
करी बंदनां सैंन रैदासू, पहुंचे अपनैं मिंदर पासू ।।१४।

---

१. देवोत्थान एकादशी ।

निरगुन सुरगुन कहीऐ ऐकै, जिन को करै आपनी टेके ।
निरगुन ब्रह्म न हालै चालै, सुरगुन धरि भगतन प्रतिपालै ।।१५।।

सुरगुन मांषन कहीऐ भाई, निरगुन धृत लीयौ तत ताई ।

दोहा

हरि गुन कोई न बरन सकै, हारे सुर नर नाग ।
दास आनंत बिचारिके, सरन गहै बड़ भाग ।।

विश्रां - १०

तब निरगुन ध्यांन गह्यौ रैदासा, छूटि गए करम धरम के पासा ।
कथा कीरतन सुमिरन लागे, अंतरजांमी अंतरि जागे ।।१।।

जिहि बिधि सुषदेव संकर सेसू, सो कबीर दीन्हौं उपदेसू ।
जहां मन चढ्यौ उपरली पैरी, तब नीचाकूं नजरि न हेरी ।।२।।

ता पीछें असी बिधि ध्याऊं, फुनि झाली कै उपज्यौ भाऊ ।
जौ द्वारै आवै गुर देवा, तौ नीकी बिधि कीजै सेवा ।।३।।

जिनकै द्वारै गुर न पधारैं, ते तो जनम अबिरथा हारैं ।
तब झाली भगत कूं बूझै, मेरै अैसी तुम क्या सूझै ।।४।।

भगत कहै धनि धनि यहु भाऊ, जौ तुम कहहौ अब लै आऊं ।
झाली कहै जाइ बीनती कीजै,अपनी जानि मोहि दरसन दीजै ।।५।।

ज्यूं माली सींचै बन बेली, अपनां रोपा तजै न मेली ।
अठारा भार घनपुरवै आसा, मेटै स्वांति सीप की प्यासा ।।६।।

ज्यूं माता बालक कूं पोषै, यूं सतगुर आत्मा संतोषै ।
करि बीनती पत्री मैं लिषाई, मुष आष्यांन भगत कूं सिषाई ।।७।।

चाले भगत गहर जिन लाई, कासी नगर पहुंचे जाई ।
कीयौ प्रनाम मिलै रैदासा, संतन के जुथ देषे पासा ।।८।।

सब सू मिलि पत्री जब दीनी, तब रैदास बचाहर लीनी ।
भगति कही बिगति सब बांणी, दरसण काजै आतुर रांणी ।।६।।

तब चलिबा की बात चलाई, सब संतन कूं षबर सुनाई ।
अैसी जुगति कहै सब संतू, ज्यूं ही आग्या दे भगवंतू ।।१०।।

तब रैदास बिचारी बाता, गुर समांन कबीर बड़ भ्राता ।
ताकूं बूझन प्रात पधारे, कबीर आदर करि बैसारे ।।११।।

तब कबीर कौं बचन सुनाया, चीतौर तैं हम कूं दल आया ।
द्यौ आग्यां तौ हम अनुसरि हौं, कहौ चलूं कहौ उत्तर भरिहै ।।१२।।

सो कबीर कही मति ऐसी, सो हरिदास कै हिरदै बैसी ।
केसौ की आग्या तुम जांऊ, राषौ दासातन कौ भाऊ ।।१३।।

आग्या मांगि रैदास जु आए, प्रात रमन कूं बचन सुनाए ।

दोहा

आग्या लई कबीर की, फुनि आग्या हरि दीन ।
रमन मतौ चीतौर कौं, जन रैदास तब कीन ।।

विश्रां - ११

प्रात समैं रमन कौं कीन्हां, आपन सषा संगि सब लीना ।
सीलवान सुमरन मन सारो, आग्याकारी संत सिधारे ।।१।।

ग्यांन ध्यांन निरगुन मत धारे, सबही अनैमै सबद बिचारे ।
औसा सिष सदा संग सोहै, मनष कदा देवता मोहै ।।२।।

जहां जहां हरिजन चलि जावैं, दरसन देषि सबै सुष पावैं ।
कृष्ण कीरतन हरिजस[1] करिहै, प्रेम सहत सबकै मन हरिहैं ।।३।।

जिन कै द्वारै हरिजन पग धारैं, कोटि पाप जौ जीव उधारैं ।
अति उछाह करि प्रेम बढ़ावैं, हरि के जन कौनें नहिं भावै ।।४।।

ऐसा रमत बहौत दिन लागा, झाली आतुर हैरै भागा ।
चलि चोतौर निकट जल आए, तब रैदास द्वै भगत पठाए ।।५।।

भगतन जाइ सुनाई बांनी, अधिक उछाह भयौ तब रानी ।
धनि दिन आज धरि धनि गेहू, आए बचन सुनाए तेहू ।।६।।

तब रैदास चलि आए नेरा, पहले बाग दीन्हौं डेरा ।
मंत्री सबै बुलाए रांनी, सनमष पठए सब रजध्यांनी ।।७।।

लोक महाजन दरसन जांहीं, ब्राह्मन सुनि मन मैं पछितांहीं ।
सकल लोक मन आनंद हूवा, बिप्र दुषी अति जरिबरि मूवा ।।८।।

१. विशेष प्रकार की कविता—अतिगेय ।

सकल सौंज ले रांनी आई, पान सुगंध गुलाल मिठाई ।
हरि बोलो हरि बोलो बोई, बाग बन्यौ बैकूंठा सोई ।।६।।

कथा कीरतन बहु बिधि कीन्हौं, बांटि प्रसाद सबन कौं दीन्हौं ।
पाछै डेरा नगर बिचारें, महमां करी नगर हमारै ।।१०।।

महमां बहौत भई अधिकाई, मंडली सब घर कौं पधराई ।
मंगाइ पटंबर आनि बसारे, चरन धरत गुरदेव पखारे ।।११।।

दोहा

महमां गुर गोबिंद की, करै कहै सब थोर ।
सीस दीयां ऊरन नही, यातैं बिभौ कहौ कही और ।।

विश्रां - १२

अधिक उछाह कीयौ यूं रांनी, ता पीछे भोजन की ठांनी ।
सकल बिप्र मिलि घात उपाई, याकौ काज बिगारौ जाई ।।१।।

सूद्रहि आंनि करी महमानी, घर के बांभन छाड़े रांनी ।
ताको कारिज रांम संवारै, ऐसो कौन जु ताहि बिगारै ।।२।।

सबही चलि करि दरबारहि आए, षीज करि रांनी डरपाए ।
रांनी कहे अधर क्यौं ऐसें, धरती षेत छिनाऐ कैसें ।।३।।

बिप्र कहैं तैं सबै बिगार्‍यौ, रजध्यांनी मैं छांटौ पार्‍यौ ।
सब राजा बिप्रनकूं मांनैं, और अनेक तिनैं नहीं जांनैं ।।४।।

जौ तुं पुनि करन कूं होती, तो पहली षबर हमैं कूं देती ।
जिग[1] करैं ते बिप्रन कौं ईछैं, और सकल बिप्रन कै पीछैं ।।५।।

जहां तहां बिप्रन अधिकारे, तैं गुर कीयौ मधि चमारे ।
रांनि कहै सुनौ रे भाई, मेरै तौ मन ऐह सुहाई ।।६।।

करनी हीन सूड है सोई, करनी करै स उतम होई ।
उत्मि माधिम करनी मांहीं, मनिष देह उत्म कछु नांहीं ।।७।।

कांम क्रोध लालच नौद्वारा, एतौ घट मैं ऐह चमारा ।
उत्म भए तिनूं ए जीते, बांभन भया भालमीक[2] काते ।।८।।

१. जिग - यज्ञ । २. भालमीक—वाल्मीकि ।

जाति पांति नांहीं अधिकारा, रांम भजैं ते राम पियारा ।
नाहीं कुछु तुम्हारे सारै, ऊठौ बिप्र जाहु तू द्वारै ।।९।।

बिप्र बहुत मन मैं दुष पांवै, क्रोधकरैं रांणीं डरपावैं ।
पहली हम कौं देह रसोई, पीछे ज्यूं भावैं त्यूं होई ।।१०।।

रानी कहै नहीं मन धीजै, गुर पहली तुम कूं क्यों दीजै ।
अैंसें झगरौ बहौत उठायौ, तब रैदास एक भगत पठायौ ।।११।।

हमारे नंहीं हारि न जीती, इनकी तुम राषौ रस रीती ।
मन मैं समझिर आग्या मांनी, षिजत रसोई दैहै रांनी ।।१२।।

मन अनभाव बिप्र बुलाए, हूं ते नगर मैं सब उठि धाए ।
लैन रसोई बांभन दोरै, गिनती जन सात सै जोरे ।।१३।।

लैंह बहौरि बिचारैं मन मैं, करौ रसोई सारे दिन मैं ।
हम छातां कोई आन न पावै, औसे कोरा कलस मँगावै ।।१४।।

करैं असनांन ढील मन मांही, हरि जन बैठा हरिगुन गांहीं ।
भई रसोई जींवन लागा, पाघ उतारि कीया सिर नागा ।।१५।।

सबै बिप्र हरषै मन मांहीं, हीं आहार गति समझी नांहीं ।
तब रैदास ध्यान मन दीन्हां, धरे ध्यांन बदेह तन कीन्हां ।।१६।।

करनहार का का नहीं करहीं, मांन सबै बिप्रन का हरहीं ।
दरसन बहौत एक की झांई, यूं बदेह जन सब की ठांई ।।१७।।

सबहिन कै संगि जींवन बैठा, उन वापैं उन वापैं दीठा ।
सब कूं इचरज भरा तमासा, जेता बिप्र तेता रैदासा ।।१८।।

तबही एक डेरा कूं ध्याए, जन रैदास तहां पाए ।
धनि धनि करि बोलै सब कोई, तबै बिप्र राषै मुंहि गोई ।।१९।।

सबही कै मन उपजी लाजा, साध संतायां होइ अकाजा ।
जो वै कोप करै हम ऊपरि, तो जांहि सबही जरि बरि ।।२०।।

हम अपराधी वै जन पूरा, उनकै साहिब सदा हजूरा ।
सांचे हरि सांचे हरि जना, यूं प्रतीति पकरी बांभना ।।२१।।

दोहा

धनि धनि साहिब तूं बड़ा, और बड़ा तुम दास ।
जाति पांति कुल कुछ नहीं, बांभन भए उदास ।।

बहौरि सबै मिलि मतौ उपावा, जाई गहै रैदास के पावा ।
चले सबैही गहर न कींनी, बिनती करि झाली संगि लीनी ।।१।।

कंवन भांति हम चरन गहोया, बहौतैं चूक परी हम महियाँ ।
घर डेरै डंडोत जु करता, इहि बिधि आए मन मैं डरता ।।२।।

तब रैदास बोले ह्वै दीनां, तुम ऊंचे हम मधम कमीनां ।
कैसी पर डंडोत जु करहौ, अहो बिप्र तुम लाज न मरहो ।।३।।

बिप्र हारे पर बोल न आई, सबन कौं सुष दे सुषदाई ।
राजा परजा सबही आए, निंदया करते तिन मा हूं भाए ।।४।।

बिप्र बहुत बिधि बिनती करिहै,क्रौन भांति करि हम निसतरिहैं ।
तब रैदास कहै समझाई, आन जनम की कथा सुनाई ।।५।।

होता बिप्र नहीं हरि जानी, तातैं मोहि सुड़ करि आंनीं ।
कनक मांहि जनेऊ काढ़ी, तब तैं देषि भए है आढ़ी ।।६।।

कीया भगति भया हैं सूचा, भगति बिनां सबही जग नीचा ।
जाति पांति नांहीं अधिकारा, भगति कीया उतरे भौ पारा ।।७।।

बेद पुरान कहै या बांनी, भगति बसिहै सारंगप्रानी ।
जनम सुफल हिरदै हरि भाषै, भजन प्रताप सबन परि राषै ।।८।।

जन रैदास कहै बिधि अैसी, सो सबही कै हिरदै बैसी ।
बिप्र कहै तुम गुरु हमारा, अपना चरानां जाइ उबारा ।।९।।

माथें हाथ तुम देहू स्वामी, हम सेवग तुम अतरजांमी ।
तब रैदास सबै सिष कीया, कृपा करी माथै कर दीया ।।१०।।

राजा परजा सब सुष पावै, जै जै कार प्रेम बरावै ।
भगत भगवंत भिनि कछु नांही, देषै आंन सु जरि - बरि जांहीं ।।११।।

श्रीपति साधू एकै बिचारा, ए समझै सो उतरै पारा ।
दास अंनत प्राकृत भाष्यौ, भगत भेद याहीं मैं राष्यौ ।।१२।।

बीस बार जब बोले साषी, तब मैं भगत परचई भाषी ।
अन्कुर एक जू जूठा नांहीं, जानैं साध असाध रिसाहीं ।।१३।।

कोटि मुनेश्वर गावै कोई, रसनां कोटिक पावै सोई ।
निति प्रति नोत्म हरि गुन गावै, तउ न करतां गति पावै ।।१४।।

हरि सागर मैं बूंद समांनी, कोई न जानैं कहाँ हिरांनी ।

दोहा

हरि गुन कोई न बरन सकै, हारे सुर नर नाग ।
दास अनंत बिचारिकैं, चरन गहै बड़ भाग ।।

•

कबीर - रैदास गोष्ठी

रचयिता

सेन नाई

कबीर-रैदास के समकालीन

कबीर - रैदास गोष्ठी

नही नहीं हो माधौ हित मोरा ।।
मैं कैसै दरसण पाऊं रांम तोरा ।।१।।

कबीर कहै जी ।।

एक ही ब्रह्म एक मलमूत्रा ।।
एक लोही एक गूदा ।।
पूरण ब्रह्म सकल घट व्यापक ।।
कुंण बांभण कुंण सूदा ।।२।।

रैदास कहै जी ।।

कुमति तणां दल बादल फूटा ।।
सुमति तणां प्रकासा ।।
हिरदै ग्यांन ध्यांन धरि देषौ ।।
सति भाषै रैदासा ।।३।।

कबीर कहै जी ।।

ब्रह्म ग्यांन बिन ब्रह्म ध्यांन बिन ।।
ह्रदा सुध न होई ।।
पूरण ब्रह्म सकल घट व्यापक ।।
और न दुतीया कोई ।।४।।

रैदास कहै जी ।।

तुम एक ही एक कहा कहौ स्वांमी ।।
दूजी प्रकृति कह जाई ।।
दूजी प्रकृत मैं रूप धर्या है ।।
साधां एह बताई ।।५।।

कबीर कहै जी ।।

जेता फूल र तेती बासनां ।।
जेता पवन र पांणी ।।
जे या उतपति प्रलै होती ।।
तौ प्रकृति कहां समांणी ।।६।।

रैदास कहै जी ।।

प्रकृति समांणी परम पुरष मैं ।।
सो बनराबन★ मैं आया ।।
गोपिन कै संगि ग्वालैनि कै संगि ।।
चटकी दे दे गाया ।।७।।

कबीर कहै जी ।।

नां वै नाचै नां वै गावै ।।
नां वै बेणि बजावै ।।
पुरष न नारि नाथ नारायण ।।
वै औतार न आवै ।।८।।

रैदास कहै जी ।।

जे लीला औतार न होती ।।
तौ जीव कहां निसतरते ।।
अंध धंध की षबरि न होती ।।
सब जीव नरक परते ।।९।।

कबीर कहै जी ।।

कहां नरक है कहां सुरग है ।।
कौ आया कौ देष्या ।।
हंस बटाऊ कीया पयांना ।।
चलत न काहू पेष्या ।।१०।।

★ वृंदावन

रैदास कहै जी ।।

ठाढा देष्या कदम की छहियां ।।
कंवल नाल कर लईयां ।।
पीतांबर बैजंती माला ।।
मोर मुकट सिर दईयां ।।११।।

कबीर कहै जी ।।

अष्ट कंवल दल हृदा भीतरि ।।
जे यौ मन पतियावै ।।
त्रिकूटी संगम दिढ़ करि राषै ।।
तौ आवागवण चुकावै ।।१२।।

रैदास कहै जी ।।

तुम आवागवण ह्वैण द्यौ स्वांमी ।।
गांवण द्यौ गोपाला ।।
वा कै रूप छली बृज बनिता ।।
मोहण नंद के लाला ।।१३।।

कबीर कहै जी ।।

कहां नंद अरू कहां के लाला ।।
कहौ कहां तैं आया ।।
अलष पुरस अबिनासी पूरण ।।
कहू क बिरलां पाया ।।१४।।

रैदास कहै जी ।।

चहुं दिस नंद रू चहुं दिस लाला ।।
चहूं दिस बेदां गाया ।।
जहां जहां पाप प्रगट्या स्वांमी ।।
तहां तहां उठि ध्याया ।।१५।।

कबीर कहै जी ।।

नही तहां पाप पुनि भी नांही ।।
नही तहां बेद र बांणी ।।
कहै कबीर सुनौ रैदासा ।।
जोति मैं जोति समांणी ।।१६।।

रैदास कहै जी ।।

कौंण पचि मरै गुड़ी कै वोटै ।।
कौंण गहै पियाला ।।
बडी लूटि मैं रतन षजानां ।।
रांम कृष्ण औतारा ।।१७।।

कबीर कहै जी ।।

जा कूं तुम औतार कहत हौ ।।
सो होता जम झौर्या ।।
अबिनासी का मरम न पाया ।।
त्रिगुण नदी मैं बोर्या ।।१८।।

रैदास कहै जी ।।

नृगुण सुरगुण एक गुसांई ।।
जा मैं रेष न रोपा ।।
सो हम देष्या बनराबन मैं ।।
नंद घरां नंद गोपा ।।१६।।

कबीर कहै जी ।।

कहां नंद रू कहां जसौदा ।।
कहौ कहां का जाया ।।
निराकार निरलेप निरंजन ।।
नृगुण बेदां गाया ।।२०।।

रैदास कहै जी ।।

वै है करता वै है भरता ।।
वे केवल वे कृष्णां ।।
निराकार आकार एक ही ।।
सो रटि ल्यौ हो रसनां ।।२१।।

कबीर कहै जी ।।

कानी★ कथा न रीझूं राचूं ।।
सांची सिर पर राखूँ ।।
निराकार कूं नवणि हमारी ।।
अघट अमी रस चाषूं ।।२२।।

रैदास कहै जी ।।

सुणौ कबीर पीर मति वै ही ।।
वै बलि काज संवारण ।।
कंस केस हिरणाकुस हतिया ।।
भक्त प्रहलाद उधारण ।।२३।।

कबीर कहै जी ।।

देह धरै ता कूं नहीं धीजूं ।।
अलष न औतरि आवै ।।
सुनि मंडल मैं जोति झिलमिलै ।।
सो म्हारै मनि भावै ।।२४।।

रैदास कहै जी ।।

भगत हेत उन देह धरी है ।।
बह्म बिड़द कै काजा ।।
रांवण कुल कुटुंब सब काट्यौ ।।
दियौ बभीषण राजा ।।२५।।

★ कानी—कन्हाई-कृष्ण,

कबीर कहै जी ।।

वै मरै न मारै षिरै न षारै ।।
वै अबिनासी ऐसा ।।
पुरष न नारि नाथ नारायण ।।
नांऊं★ भानां★ बैसा ।।२६।।

रैदास कहै जी ।।

वै मरै न मारै षिरै न षारै ।।
वानै कौंण बिड़द दे गाजै ।।
पुरष न नारि नाथ नारांयण ।।
कहौ किस बिधि पाजै ।।२७।।

कबीर कहै जी ।।

बिड़द बहुत है अकथ कथत है ।।
जिन षोज्या तिन पाया ।।
घट घट मैं अघट अबिनासी ।।
अलष निरंजन राया ।।२८।।

रैदास कहै जी ।।

तुम भूला छौ ब्रह्म ग्यांनी ।।
वा का मरम न पाया ।।
अंजन छौड़ि निरंजन गाया ।।
मिथ्या जन्म गमाया ।।२९।।

कबीर कहै जी ।।

गुर भूलै तौ सिष समझावै ।।
सिष भूलै गुर तारै ।।
कहै कबीर सुनौ रैदासा ।।
समझि भजौ निरकारै ।।३०।।

★ नांऊं—हज्जाम : बाल बनानेवाला, ★ भानां—भनित : रहा हुआ ।

रैदास कहे जी ।।

मैं तौ निगम नृति होइ बूझया ।।
सो तौ सब यूं भाषै ।।
बेद कतेब कौ कह्यौ न मांनै ।।
टेक आपणी राषै ।।३१।।

कबीर कहै जी ।।

बेद कतेब षोजि सब देष्या ।।
ऐ सब ऊली आसा ।।
यौ संसार नरक सब बूड़ौ ।।
करि करि बेद बिसवासा ।।३२।।

रैदास कहै जी ।।

घट तन बधत घणां नहीं थोडा ।।
वै चंचल वै थीरा ।।
तरुन बृध बालपन वै ही ।।
वै पाजी वै पीरा ।।३३।।

कबीर कहै जी ।।

घट तन बधत घणां नहि थोड़ा ।।
वै निहचल निहकांमी ।।
अण होता हूवा हरि नांही ।।
यसा हमारा स्वांमी ।।३४।।

रैदास कहै जी ।।

तुम साची कही सही सति वा ही ।।
सबलां सज्या लगाई ।।
सबल सिंघार्या निबला तार्या ।।
सुनौ कबीर गुरभाई ।।३५।।

कबीर कहै जी ।।

राग दोष सुष दुष तैं न्यारा ।।
वै नृवरति भ्रम न भौगी ।।
प्रवर्ति नहीं पुरष परमांनंद ।।
वै जोति सरूपी जोगी ।।३६।।

रैदास कहै जी ।।

साध बेद भागौत बतावै ।।
सुर नर बहुत संघारा ।।
भगत-बछल भगतां बसि हूवा ।।
मति मेटौ औतारा ।।३७।।

कबीर कहै जी ।।

ब्रह्मा बिष्ण सेस अरू संकर ।।
सुर नर जाकी सेवा ।।
अनंत लोक के ग्वाल गुसांई ।।
ऐसा हमारा देवा ।।३८।।

रैदास कहै जी ।।

तेरी माइ तुरकणी बाप जुलाहा ।।
पुत्र भया ब्रह्मग्यांनी ।।
बेद कतेब कौ कह्यौ न मांनैं ।।
बात आपनी ठांनी ।।३९।।

कबीर कहै जी ।।

तेरी माइ चमार बाप चमारा ।।
कहा भक्ति तुम कीनी ।।
रांम नांम का मरम न जांन्यां ।।
माथै बेठि तुम लीनी ।।४०।।

रैदास कहै जी ।।

हंस चढ़या ब्रह्मा जी आया ।।
साषी बेद बुलाया ।।
साति भक्ति रैदास करी है ।।
कबीरै भेद न पाया ।।४१।।

कबीर कहै जी ।।

झूठा साषी झूठा ब्रह्मा ।।
झूठा बेद पुरांनां ।।
जा जा ब्रह्मा घरां आपनैं ।।
तुम भी भेद न जांना ।।४२।।

सिंघबांहणी बाद करत है ।।
बोलत मधुरी बांनी ।।
सति भक्ति रैदास करी ।।
कबीरा भक्ति न जांनी ।।४३।।

कबीर कहै जी ।।

तूं आठें सातें गला कटावै ।।
घर घर षाती डौलै ।।
जा जा जगत की जननी ।।
कूडी साषि क्यूं बोलै ।।४४।।

दुरगा कहै जी ।।

भोपति अनड़ मैं छत्र नवाया ।।
हू र कृष्ण घरि दासी ।।
बकत होइ बनां जाइ बैठा ।।
दे गली मार्या पासी ।।४५।।

कबीर कहै जी ।।

जो तुम पार्या नरक गरास्या ।।
जा कै माया माता ।।
कनक कांमनी दोऊ त्यागी ।।
करि चे जौ ले लाता ।।४६।।

दुरगा कहै जी ।।

तीन लोक मैं बसि करि राष्या ।।
हू र सकल को माई ।।
सुर नर दांणां देव भिष्यारी ।।
हूं र किनूं नहीं षाई ।।४७।।

कबीर कहै जी ।।

तैं निगुरा बाष्या भेद बिन भूंदू ।।
हम उबर्या हारि लागी ।।
तौ सेयां जे गति मुक्ति है ।।
तौ पीपै★ क्यूं त्यागी ।।४८।।

बृष चढ्या सिव बाद करत है ।।
बोलत इंम्रत बाणी ।।
सति भक्ति रैदास करी है ।।
कबीरै भक्ति न जांणी ।।४६।।

कबीर कहै जी ।।

तूं तौ भूत प्रेत कौ दाता ।।
कदि तैं भक्ति कमाई ।।
जा जा संकर घरां आपणैं ।।
मिथ्या कांइ भ्रमाई ।।५०।।

★ पीप : संत पीपा

चाल्या सिव जहां गया जी ।।
जहां गरड़ गोपाला ।।
हम कौ भूत प्रेत करि थाप्पा ।।
जुलाहा भेद अपारा ।।५१।।

कबीर कहै जी ।।

तुम तौ सिंभू अजूंनी बाद करत हौ ।।
कहां चकवै वै भोला ।।
डाल पांत के पंछी बोलै ।।
क्यूं मेटत हो मूला ।।५२।।

चहुं दिस ऊभी दुरगा कोपै ।।
महादेव षरा रिसांनां ।।
पलक मैं परलै करि रालां ।।
चहुं जुगां हम मांनां ।।५३।।

कबीर कहै जी ।।

कहा तुम मारौ कहा तुम तारौ ।।
को तेरा मार्या मरिहै ।।
तुम तौ सिंभू अजूंनी बाद करत हौ ।।
हम तुम सैं नहिं डरिहैं ।।५४।।

संकर कहै जी ।।

दस औतार हूवा मो आगैं ।।
देह धरू नहीं छौड़ा ।।
तुम लघु मनिष कुचल कबीर ।।
न करि हमारी होड़ा ।।५५।।

कबीर कहै जी ।।

दस औतारां कारिज कीया ।।
देह धरि धरम दिढ़ाया ।।
भसमागर★ आगैं तूं भागौ ।।
तब हरि आंणि छुड़ाया ।।५६।।

संकर कहै जी ।।

तीन लोक समांनी मेरै ।।
कहा सरभर उहां कीनी ।।
रांवन आइ पाइ जब लागौ ।।
तब वा कूं लंका दीनी ।।५७।।

कबीर कहै जी ।।

तुम र भरौसै रांवन बूड़ौ ।।
करि करि सेव तुमारी ।।
कुल के सब कुटुंब कटाए ।।
भूंदू बुरी बिचारी ।।५८।।

संकर कहै जी ।।

हूं र अजूंनी रिधि सिधि कौ दाता ।।
हूं भगवंत भंडारी ।।
तूं कुचल कमीण कबीरा ।।
ना करि होड़ हमारी ।।५९।।

कबीर कहै जी ।।

तुम परमोध्या तिर्या न कोई ।।
सुणि हो संकर स्वामी ।।
भक्ति मुक्ति सूं न्यारा रहि गया ।।
हरि सूं हुई हरांमी ।।६०।।

★ भस्मासुर

रैदास कहै जी ।।

कौंण तेरै ग्यांन है कौंण तेरै ध्यांन है ।।
कौंण तेरै बेद र बांणी ।।
कौंण ले कौंण आगैं झूझै ।।
या मति कौंण सूं जांणी ।।६१।।

कबीर कहै जी ।।

मन ही ग्यानं है मन ही ध्यांन है ।।
यौ मन बेद र बांणी ।।
यौ मन ले मन आगैं झूझै ।।
या गति मन सूं जांणी ।।६२।।

रैदास कहै जी ।।

सो तुम गावौ सो हूं★ गाऊं ।।
तेरा ग्यांन बिचारूं ।।
कहै रैदास कबीर गुर मेरा ।।
भरम करम धोइ डारूं ।।६३।।

कबीर कहै जी ।।

भरम ही डारि दे करम ही डारि दे ।।
डारि दे जीव की दुबध्याई ।।
आत्मरांम करौ बिसरांमां ।।
हम तुम दोन्यूं गुरभाई ।।६४

रैदास कहै जी ।।

मांषन मथि रू तत दिषलाया ।।
भरम करम सब जाई ।।
कहै रैदास पीर गुर मेरा ।।
या मत तुम सूं पाई ।।६५।।

★ मैं

कबीर कहै जी ।।

नृगुण ब्रह्म सकल कौ दाता ।।
सो सुमरौ चित लाई ।।
को है लुघ दीरघ को नांही ।।
हम तुम दोन्यूं गुरभाई ।।६६।।

चल्या चल्या बिष्ण जी आया ।।
जहां कबीर रैदासा ।।
उठौ कबीर सनमुष ह्वै देषौ ।।
करौ कौंण की आसा ।।६७।।

कबीर कहै जी ।।

कहै कबीर जी सुणौ बिष्ण जी ।।
तुम हौ चतुर बबेकी ।।
हम तौ बुरा भला जन तेरा ।।
या तत बस्त किन देषी ।।६८।।

गरड चढे गोपाल कहत है ।।
सति भक्त म्हारै दोई ।।
सति कबीर धनि रैदास ।।
गावै सैंनां सोई ।।६६।।

इति श्री सैंन बिरचित कबीर अरू रैदास संबाद संपर्ण ।।

नागरीदासकृत पद प्रसंग से

रैदास

काहू समय रैदास जू को उत्कर्ष बहुत लोकनि कौं करत देखि, कितनेक ब्राह्मणन आंन धर्म अभिमानी हे, तिनकैं बहुत मत्सरता उपजी । तब बहुत सुबुधी सुहृद ब्राह्मन वैष्णवधर्म मैं सावधान हे । तिन उनकौं मनैं कीने तथा भक्ति महातम कहि सुनायो, तऊ उनके मन मैं न आई । वैसी ही वैसी मंडली मिलि राजा पैं जाय पुकार करी जु यह हीन जात, ठाकुर क्यौं सेवै, धर्मशास्त्र मैं मनै है, या को दोष तुम्हैं पहुँचै है । तब राजा नैं यह कही जो भक्ति महातम घटि नहिं, अरु शास्त्रहू खंडन न कियो जाय, यातैं ठाकुर बीच मैं पधरावो, एक ओर तुम्ह बैठो, एक ओर वे बैठें । तुमहू आराधन करो, वेहू आराधन करो । जासूँ ठाकुर प्रसन्न हौंहिगे, ताही की ओर सुतह सिद्धि सिंघासन सहित पधारैंगे । तब ऐसैं ही कियो । एक ओर ब्राह्मन अपरास होय, वेदपाठ करत करत द्वैं पहर बिताए; कंठ रहि गए, बहुत श्रमित ह्वै चित्त मैं दुख मानि बैठि रहे । फिर रैदास जू सौं कह्यो, अब तुम आरंभ करो । तब इनकौं और कछु तो आवत हो नहीं, द्वै मंजीरा फैंट मैं तैं निकास एक नयो पद बनाय अकेले ही गदगद कंठ दीनता करुणा सहित गावन लागे । जब भोग की तुक आय चुकी, वाही छिन ठाकुर सेवा को सिंघासन, सब देखत चल्यो । सो रैदास जू की गोद में आय रह्यो । सो यह प्रसंग अरु पद जगत मैं बहुत प्रसिद्ध भयो । सो वह यह पद—

आयो आयो हो देवादिदेव तुम सरन आयो ।
परम सुखको मूल, जाकैं नाहिं समतूल, जो चरन मूल पायो ।।
लियो विविधि जोनि बास, जम की अग्म त्रास,
तुम्हारे भजन बिन भ्रमत फिर्‌यो ।
माया मोह विषय रस लंपट, यह दुख दुसतर तिर्‌यो ।।
तिहारे नाँव बिसवास, छाड़ी आंन की आस,
संसारी धरम, मेरो मन न धीजैं ।
'रैदास' दास की सेवा, मान हो देवा,
पतितपावन नांच प्रगट कीजैं ।

●

सभी पंचबानी संग्रहों में नामदेव, कबीर, रैदास अनिवार्य रूप से उपस्थित हैं । संत विचारधारा और सम्प्रदाय के लिए ये तीन संत अवश्य इस्तेमाल किये गये हैं । इसके साथ ही गोष्ठी, —सागर, बोध, परची, परचई, जनम साख और बात-वार्ता ग्रन्थों में इन संतों से सम्बन्धित **लोक कथाएँ** और इनकी कविता से सम्बन्धित **पद प्रसंग** हैं ।

नागरी दास का **पद प्रसंग** और **भक्तमाल** 263 में यह चर्चा है कि विप्र चुनौती के उत्तर में रैदास जी ने **आयो आयो हौ देवाधि तुम सरण आवौ** पद गाया था । कविता और निजन्धर के सम्बन्ध को समझने के लिए ये प्रसंग उद्धृत किये गये ।

• • •

रैदास परिचई और **कबीर रैदास गोष्ठी** दोनों रचनाओं की आधार प्रतियाँ इंडिया आफिस लाइब्रेरी, लंदन से प्राप्त की गयी और जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, साहित्य सम्मेलन और पूना के हस्तलेखों से मिलाकर पाठ तैयार हुआ ।

ये दोनों पुस्तकें रैदास मन्दिर, राजघाट, वाराणसी में संगमरमर पत्थर पर लिखी गयी हैं । सम्पादक बाबू जगजीवन राम और रैदास स्मारक सोसाइटी के महामंत्री श्री रामलखन के प्रति आभारी है । रैदास सम्बन्धी अध्ययन का अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व दिलाने में इन सज्जनों की भूमिका है ।

•

Translation
of
RAIDAS PARICHAI

1. The city of Banaras is a good place, *(here)* nobody is called sinner After death nobody goes to hell, everbody who comes *(here)* has to hear the name of shankar *(shiva)*.

2. *(Everone here)* is an authority *(adhikara)* on shruti and smrti, there Raidas took manifestation.

   He was born in the home of Shaktas *(sakhit: goddess worshippers)*, of the Camar caste were his father and brother.

3. In his previous brith he was a Brahmin, *(but)* being a follower *(jan)* of Vishnu, he could not give up eating meat.

   Because of this crime he was given a low family *(ghar) (by god)*, *(but)* he his first life *(lit, he did the mark sign of his first life)*.

4. Not drinking milk he cried *(as)*, seeing this the family was afraid. Saying despairedly *(in request of a son)* a son has been born *(so me)*, in the house of a one who is unborn *(i.e., a god: ajayan)* has been born, indentured laborer.

5. In distress the women are not singing auspicious songs, the instruments are not played.

   Traditional doctors and exorcists *(baid-navati)* are brought they will make amulets *(jantra)* chant mantras and praclice their cures.

6. *(The father says)*: "If anyone can save my dying son,

he will be to me *(known)* as the god of medicine *(Dhananatara)*.

What he asks will do, *(and)* place enough money in front *(him)*.

7. Four days passed in this manner, *(during which)* the mother greived greatly.

Along with the family the father was sorrowful, Raidas felt it *(better)* to die.

8. *(To Raidas)*, death is better than life, *(if I)* oppose Hari then life is insipid One who accepts hari as the suireme soul *(hamsa)* lives *(if not)* he contiributes to his own dewise.

(lit. causes god to place an obstacle in his throat i.e., cause his death)

9. Where are the poor, the rich, the weak, the powerful *(metaphor here with maimantu: a young rutting elephant)*.

What can a scholar or fool do ?, without god, neither king nor poor man can cross *(the ocean of existence)*.

10. At midnight a voice came from the sky, and Ramanand knew that *(voice: i.e. what was happening at Raidas' house)*.

A son was born in the house of Camar, and *(he knew)*: "Ah, my disciple has been incarnated."

11. God *(Hari: the sky-voice)* explained the whole story which had occurred in the past.

12. *(Then Hari said:)* "Be kind-initiate *(diksha)* him, and save the dying boy."

Then, thinking it over, Ramanand explained it to the whole family *(saying)*:

13. "O' brother. It you become my devotee *(bhagat)* then god *(Hari)* will save your child's life."

Then the Camar touched *(Ramanand's)* feet *{bowed down (to him)}*, *{and said:}* "please do as you like Goswami."

14. Then without delay, Ramanand placed his hands on everyone's heads *(to give his blessing)*.

(Giving them) rosaries *(mala)* and tilaks, he made disciples of them and arranged for new garments and water pots for all of them.

(rosaries made of Tulsi wood because Vaishnava)*

*(** both ritual implements at time of initiation)*

15. Then he called for a brand new *(Kora)*, water pot and everyone entered into a spirit of devotion.

A feeling of joy spread to everyone, and Raidas began to drink milk *(lit. sucked on her breast)*.

Congratulations were offered and drums were played; and happiness was established in every house.

DOHA

1. Hearing of the birth of Raidas, the lord was pleased. Anantdas sings, "All the bonds of actions karma were cut."

Rest 2

1. In this way throughout the ages god *(Hari)*, the master of his devotees, removes the afflictions of his followers.

Every day his faith in god *(Hari) (increased)*, and slowly he became a young boy *(lit, big)*.

2. When he was seven years old, then he became edept in the nine types of bhakti.

He *(started)* serving the devotees of the lord *(Hari)*, he observed every teaching spoken by his Guru *(lit. the teachings spoken by his guru he did not avoid.)*

{the nine types of bhakti are: hearing (sravana), singing the qualities of god (kirtan), memory (smaran), worship of legs feet (padasevan), offerings (arcan), bowing (vandon), feeling of servanthood (dasya), feeling of friendship (sakhya), prayer (atmanivedan)}.

3. Seven years *(and 1/4)* passed in this way, his love for Krishna *(Kesau)* grew greatly.

Family *(relations)* are said to be a good thing in childhood, *(but now)* all of this seemed to him insipid.

4. When he grewup then he was separated *(from the family)* family property was given to him.

   He was put in the back portion of the house, poor Raidas could say nothing.

5. Purchasing tanned leather, he would usually make shoes from it.

   He mended torn, broken and worn shoes, *(but)* no one paid attention to his hard labor.

6. In this way his profits increased readily *(easily)*, while he paid no heed to the *(sype of)* work he performed *(it was in his fate)*.

   He used to make offerings in a separate temple, where no obstruction *(lit. bad low person)* came *(in the way of his worship)*.

7. *(Performing)* worship, making offerings and purifying himself *(?)*, he knew the ways and practice of devotion.

   Subjecting his body to great martifications *(Kasni)*, five years passed in this way.

8. God *(Hari)* came taking the garb of a devotee, and the devotee Raidas was very pleased.

   Greeting him respectfully Raidas had him sit on a seat *(asana)*, speaking words of humility he washed his feet.

9. They recited stories of god *(Hari)* for one ghari *(see note)*, after that Raidas prepared food.

   The sadhu *(Hari)* finished earing and sat down, then they conversed about general affairs *(lit. sorrow and happiness)*.

10. *(Hari, the sadhu)* said, "Raidas tell me what is in your heart and how you have been *(lit. tell your mystery affairs of the heart, and how has your religion been !)*

    I do not see any wealth here; have you kept well ?" *(lit...; has your body found rest ?)*.

11. Then Raidas explained, "The king of the Raghu clan *(Rama)* is my only wealth; one crore *(ten million)* Lakshmis are at his feet, *(anyone in)* his refuge *(knows)* no sorrow or poverty."

12. Raidas spoke this much and god *(Keshava)* was very pleased *(at this)*.

    (He said), "Listen to what I have tosay Raidas, I shall rid you of your poverty immediately.

13. I have been renouncer *(vairagi)* since childhood, obtaining knowledge I abandoned *(the world of)* illusion *(maya)*.

    Roaming and wandering I have come to you, yeaterday I found the philosopher's stone *(paras)*.

14. Please do me the favor of taking it, it is of no use to me *(lit. my work does not come (from it))*.

    If iron touches this stone it will turn to gold which no one can change back *(lit. erase)*.

15. In this way you can amass gold and distribute it *(give)* to whom you desire.

    Fore that no fault *(dosh)* will accrue to you and you can double your devotion easily. !"

DOHA

2. Hearing the lord's words, Raidas remained silent. *{He thought}*: "He has come to test *(see)* my character *(truth)*, or to ruin my devotion."

Rest 3

1. Raidas did not speak for a moment and Hari Ji took the stone out of knot *{Hari said}*, "Don't think I am trying to tempt you, understand that I give it to you *{freely}*.

2. Look at the power *(lit. sign)* of the stone !" Taking a needle he turned it into gold.

   "It happens *{simply}* like this-there is no other *{way}*; it is not a matter of knowledge or science."

3. Then Raidas said, "I shall never use this *(lit. I shall never look upon it {with} my eyes).*

A sadhu does not look at either gold or women; to touch these things is a sin *(lit. having taken {these} by the hand creates an offence).*

4. If deeds could be perfected through gold, then why do kings abandon their kingdoms *(i.e. become ascetics).*

Having begged for alms they eat, and remain in constant fear of women and gold.

5. If I should ammass wealth, then having abandoned purity *(sat)* how long shall I live ?"

Then Hari spoke without pretext, "Listen. No one should blame the gold.

6. There are golden temples in heaven *(Vaikuntha).* and Hari wears *(a)* necklace of gold.

Dwarka is made of gold, and all the gods wear golden ornaments.

7. Money *(gold)* is used in the service of god *(Hari),* the god *(krishna)* gave gold to sucama.

Offer gold to Krishna lovingly, expend your wealth *(gold)* in celebrations honoring dadhus and itinerant saints *(mahocha).*

8. One who understands *(finds)* the secret of gold, he can have a heaven *(baikath)* of gold made.

If you give your money *(gold)* to prostitutes, then you are buying hell for yourself.

If you should gamble with your wealth, then how shall you attain *(lit. pushed) {liberation}* in this one birth ?

10. If one spends *(gives)* their money on eating meat will certainly *(easily)* go to hell.

11. If one spends money which couses the death of others, then how will he obtain liberation ?

If one spends money to seduce another wife's then he shall die without hope of being saved.

12. If one takes a bribe *(of gold),* then he honors *(gives respect)* criminals

If one hides money in the earth, then he neither gives it to another nor uses it for himself.

13. *{Then}* how can gold liberate him ?, this birth of his will be wasted." When Hari *{finished}* speaking, then the devotee Raidas spoke:

14. "Why are you placing it in my hands ? Why are you holding celebrations nohoring sadhus and itinerant monks *(mahocha) {yourself}* ?"

{The sadhu spoke}, "I have been kind to *(on)* you; now Raidas don't hesitate *{about this}*".

15. Taking the stone he put it at Raidas' feet. Then Raidas turned his back *{on him}.*

DOHA

3. "*{because}* The husband of Lakshmi *(Vishnu)* is pleased *(with Raidas, he wants to offer this stone);* If Raidas refuses it, Hari will not let him go. Refuge in Hari is an ocean of happiness, "Anantdas sings.

Rest 4

1. Considering {a monents jan Raidas spoke: "I shall accept your kindness *(lit. limitation).*

If you are so determined to do *{this}*, then wrapping it in some cloth place it in the thatch *{of the roof}*."

2. *{The sadhu spoke}*, "It *(the stone)* shall serve the naked and hungry; taking is difficult *{thus}*, use it with modesty."

Keshava *(Kesau)* wrapped the stone and placed it in the eaves *(?)* of the house *(i.e. between a beam and the roof).*

3. *{The sadhu thought}*: "In my prescence *(seeing me)* he is embarrassed-after *(I leave)* he will produce wealth and enjoy (eat) it."

Thinking this Keshava *(Kesau)* went awau and one year passed since this incident.

4. The devotee Raidas never cast his eyes *(upon the stone)* and in the thirteenth month the sadhu returned.

   (The sadhu) spoke, "O' Master, youhave accepted hardship.

   What curse *(dosh)* has fallen *(upon)* that stone ?"

5. Then Raidas, folding his hands, said. "I did not touch *(lit abandoned)* it *(thinking)* it a common stone.

   To me the name of god is the philosopher's stone; I have no business *(work)* with that stone.

6. I know that *(stone)* which severs cuts the one-hundred bonds of action *(karma)* and through which one's body, mind and life are altered *(turned)*.

   Hari is the philosopher's stone and the *(true)* treasure *(lit. heap of gold)*, all else is the fetters of illusion *(maya)*."

7. *(Seeing that)* Raidas did not accept the stone, Hari took it back.

   (Thus), taking the stone the lord *(Murari)* went away and again a plan *(thought) (trap Raidas)* arise in his mind.

8. While Raidas slept *(lit. in his dreams)* Hari placed five gold coins in the folds of his dhoti and entreated *(binti)* him *(as follows)*:

   "Having taken the gold don't behave badly with it, keeping affection in your heart worship sadhu !"

9. *(When Hari)* spoke this much, *(then Raidas)* became very pleased having accepted the words spoken by the lord *(Murari)*.

   When it became morning he *(Raidas)* woke up and saw that wealth had been given-*(he thought)*: "When did I for this. ?"

10. From that time he *(began)* to receive five coins daily

all of which he used for feeding sadhus and itinerant monks *(mahocha)*.

He had many temples and large houses built and here and there quarters for devotees *(alsot)*.

11. *(There)* sacred stories, devotional songs *(kirtans)* and discourses were recited and *(There was no entorance for offer work no other religions (besides Vaishnavism) entered there.}*

    The people *(lok)* of the city went there to take his darshan, and the Brahmins were very angry with them *(as a result since he was a Camar)*.

12. *(They (the Brahmins) said)*: "He must have found someone's lost money *(lit lying around), (but)* rustic bumplins do not know *(how)* to use *(eat)* money.

    He is acting hypocritically and making people crazy *(for these things, e.g. temples)*, and this shudra causing people to worship him.

13. There is no one to teach him and injustice is occurring in the city.

    His family, work, relations and dwelling place are *(all)* inferior *(madham/madhim)* ?.

14. He and his name is low, thus, why does he worship the salagram ?

    It is explained in the Vedas and Puranas, a Shudra is unclean and is not to be touched."

15. Felling such anger, the Brahmins went to half Raidas' *(activities)*.

    (They told him): "If you want to remain in this city then you must not *(jin ?) (continue)* to unstruct others.

16. Simple remember the name of the lord *(Hari)* and don't worship the salagram."

    The king of the city checks them but the brahmins are shame less.

DOHA

4. (The Brahmins) do not accept the king's policy,
they are inflated (filled) with self-conceit.
The Brahmins shall not be checked,
they are ready to die in
the royal court.
Rest 5

1. *(Brahmins surnamed)* Dwivedi, Tiwari and Caturvedi came, alos Vyasa, Acarya Pathk streamed *(ran) towards the royal court).*

   Both *(all)* young and old were present while Raidas argued *(discussed) (with them)* alone.

2. All sat where King Baghal Das *(King's name is Bir Singh, his subcaste is Paghal),* and it became a political event.

   All the people came for the spectacle, without paying *(giving)* a fee they were entertained *(lit. found interest curiousity).*

3. A few of Raidas' followers *(bhaubhiya)* collected and checked *(Ravidas)' detractors),* undeterred *(lit. not accepting doubt)* the Brahmins began shouting.

   Then Raidas came outside and *(both)* the king and people there bowed their heads.

4. Spreading out a mat Raidas sat on the ground; it was as if the moon was illuminating *(that place).*

   The stars *(also)* seemingly near added to his lustre, there *(like)* the power *(pratap)* of devotion *(bhajan)* cnothing.

5. Raidas spoke without guile *(lit. pure words):* "For what error am I being theatened ?"

   The Brahmins spoke: "Listen, o' Sudra. Why are you debasing our religion ?

6. We are the several *(puja)* guru of all, *(but now)* the people are accepting your teachings.

Whey don't you accept our position *(bat)* ?- you are committing a grave sin.

7. (When you touch the salagram, them Lord Jaganath trembles.

   When you bathe it with water, *(it seems as it)* you are pouring liquor on it.

8. *(When)* you offer tulsi, sandalwood and flowers, an offence *(dosh)* the equal *(thap)* cannot be found *(compared)* anywhere). Your light offerings are *(like)* falling tears *(i.e. impure),* and your full offerings are *(like)* the flesh of a cow.

9. Your manner *(lit. sentiment)* of performing the lamp ceremony *(arti)* is not appreciated by anyone.

   Maintain the customs of the shruti and smriti, for sadhus there is neither victory nor defeat.

10. Why do you persevere in such a religion that causes one to fall into the pit of hell ?

    (According to (It is said concerning your station: 'Don't give cooked food t anyone (because of your impureness)'.

11. Never *(don't)* remove the remeberance of Hari from your heart, and control the lusts *(kalpat)* of the five senses.

    Don't give offence to anyone; sing the *(qualities)* of the lord *(Hari)* with jay.

12. Accept *(at least)* this much of what we have said and you shall realize *(know)* your own well-being *(bhala).*"

    Then Raidas explained: "O' brothers. Devotion is far from you people.

13. The lord *(Rama)* ate the polluted *(spartially eaten)* fruits of the Bhilni *(Savari),* knowing her devotion Hari was pleased *(at this).*

    This is why For this reason I do not fear sin, and *(because of my devotion)* the name of Narayan becomes sacred holy."

* *(alternative reading from Pune manuscript for final 1/4*

verse... and being happy pleased, I shall sing (the praises of) Narayan.)

14. The Brahmins said: "Listen Raidas. You don't have any hope of liberation.

    In the Treta Yuga, a Sudra performed austerities *(tapasya)*. because of this a Brahmin died.*

* *(this is a tale from the Valmiki Ramayana occuring after the victory in Lanka; the sudra's name was Shambuh)*

15. Then Raghunath *(Rughana)* fired an arrow and the Brahmin rose *(again while)* the sudra *(lit. his breath life went)*."

    Raidas replied: "I don't have any in austerities *(tapa)* or going to pilgrimage sites *(tirath)*; I am in the shelter of Hari."

16. Hari ate the unclean food of the milkman *(Gvalni), (to him)* there was no distinction between high and low.

    Brahma came to partake of that polluted food, *(but)* he didn't obtai it since Krishna deluded *(bharamayau)* him.

17. The Vedas and Bhagavata Purana bear witness to this, and Anantdas has told you this story in this way *(Yun)*.

DOHA

5. The devotion is dear to Rama, and no one knows the mystery (of bhakti). He who knew has crossed over (the ocean of existence), no one can harm (kill) him.

Rest 6

1. The Brahmins said: "He is not moved the least bit; Keshava *(Kesau)* preserve *(our honor (lit. limit)*.

   The sage *(rishi)* Bhrigu kicked god with his foot *(from)* which the lord's *(Hari)* body became even more radiant.

2. Parusharam *(parasurama)* killed all the warriors

(kshatriyas) and gave us the knigdom twenty-one times over.

   Still *(again)* he kept great affection for the Pandavas *(lit. didn't move from the heart of the pandavas)* and eighty-eight thousand *(?)*."

3. Then Raidas said, "Listen o' pandits. No one becomes great *(Eade)* from being kicked by someone's feet.

   You don't know the customs *(riti)* of the kingdom on account of which many calamities have occurred.

4. The deed could not be done by the eithty-eight thousand sages, {but the lord *(Hari)* loyed the conch shell of the Dom sage *(supaor)* himself *(i.e. indicating his acceptance of the Dom's offering)*.

   This is the result of your worship, namely, you send *(give)* to hell one who performs it.

5. You sent king Nrig *(Naghu)* to hell, *(you Brahmins)* cursed him *(while)* Krishna liberated him.

   Again, Durvasa *(Durbasa)* is you guru whom Hari saved in the shelter of his devotee.*

**(devotee's name is Ambarish, check for reference ?*

6. Having listened to what he said *(lit. this much)*. the Brahmins seethed with anger like ghi burns *(when poured)* into a fire.

   How can a femals pig become a prime cow ?, *(likewise)* thinking it over everyone *(prefers)* the milk *(of the cow)*.

7. *(If)* a fish is in the sky then its bad smell will not disperse, *(likewise)* a dog, having bathed, cannot become good.

   How can a crow be the swan's equal ?; consider gold *(compared to)* glass.

8. There is a difference between smelly, crushed oil seeds and camphor, *(both)* the people and Vedas say this.

   If a Sudra gains victory over his senses, then no one worships his feet.

9. If a Brahmin becomes corrupt, then everyone regards *(accepts)* him as a king. *(Rajpoot)*.

Having heard what they said *(lit. this much)*, Raidas became angry *(and said)*: "But Hari renounced the *(role of)* king.

10. He refused *(the offers of)* Duryodhana and accepted grain *(suvan)* and spinach in the house of Vidura).

Rama is not yours *(alone)*, affix his sich on their foresead.

11. Come and put your salagram on the ground; *(if)* you are wellfavored *(then)* call it *(to come to you)*.

Where there is true love it shall to; "the idea *(for this test)* came *(arose)* to Raidas *(?)*.

12. The Brahmins said: "If true feelings are in your mind, *(then)* call it immediately."

Then a sense of modesty arose in Raidas and he set it on *(lit. adorned)* the throne *(platform)*.

13. *(Raidas said to the salagram:)* "If you are the lord of the four directions *(lit. homes, of which there are actually 14)*, *(then)* you will sit in the lap of your devotee."

The Brahmins said, "o' our lord *(prabhu)*; we are your brahmins."

14. The brahmins began to recite Vedic mantras *(Vedas)* in a highpitched voice, *(but)* Keshava *(kesau)* didn't accept their *(prayers)* in the least.

They recited the Gayatri mantra with full atention and performed all the other rites *(dharm ?)*.

15. On the other side Raidas took a single pada; the whole day passed and no offering of food was made *(to the god)*.

Ten and one-half hours *(3 pahars)* passed and there was neither a victor nor loser.

16. Then Raidas uttered *(mumbled ?)* two padas and tears streamed forth *(from his eyes like)* waves of love.

When *(the lord)* saw such compassion, then the salagram moved into Raidas' lap.

17. The devotee Raidas clasped it to his chest and *(both)* the king and people were pleased.

Everyone began to shout "Victory, Victory." and the defeated Brahmins went away hiding their faces.

Hanging their heads in shame *(ghunghat)*, they did not show their faces; *(sit was)* as if they had suffered *(become)* a chilling fever for six months.

18. The selfless devotee Raidas was victorious while the Brahmins became *(throughly)* brutish *(lit. "the wooden spoon of a food dish," i.e. unable to appreciate culture)*.

Anantdas says: "The lord *(bhagvan)* established the light *(pratap)* of devotion for *(all)* ages.

DOHA

6. Abandoning *(losing)* family, caste and kin Anantdas performs devotion. Hari does not distinguish between high and low; *(by)* performing bhakti one can grasp him.

Rest 7

1. Five years passed *(lit. a difference of five years happened)* and now our story moves to cittoor.

The mind of Queen Jhali was courageous, her deeds *(movement)* were replate with alms, religiosity and good company *(satsang)*.

2. All good things *(bhog)* were enjoyed by her, *(but)* she did not have a necklace *(mala)*, mantra nor guru.

A desire arose naturally in her mind that she wanted *(to take)* initiation with happiness.

3. *(she)* asked a devotee eagerly, "From whom should I receive initiation ?"

Then that devotee gave *(spoke)* this instruction, "I have searched the four directions (countries in my mind.

4. There are many saints- what should I say ?, I shall tell you of two devotees O' queen.

If you have faith in what I say, then go to the city of Kashi immediately.

5. There is one named Kabir whose caste is Julaha, *(regard him)* as the incarnation *(body)* of Sukhdev.

He has recognized the Formless *(nirguni)* Brahma, take initiation from him, O' queen.

6. And there is one Raidas, a Camar, know him to be the manifestation *(avatara)* of the sage Narad.

(If) I call him a Sudra then I feel ashamed, *(even)* kings wish *(kalapai)* to take his darshan."

7. No pandit knows the seerct *(of their incarnations)*, both are incarnations and parts *(i.e. not complete)* of Vishnu.

Queen Jhali's mind was filled *(became)* with bliss; she set out for Varanasi *(lit. gave a dwelling place of Varanasi)*.

8. The *(court)* Brahmins came along also thinking: "The queen shall take initiation *(dachya)* from us."

The queen halted (them, but) they came along obstinately anyways *(saying:)* "first the initiation. then we will bothe in the Ganga."

9. They reached Kashi in twenty days, Queen Jhali sent six persons *(ahead)* confidentially.

(She told them:) "go and inform Kabir that Jhali has come to be made a disciple."

10. A sense of hesitation arose in Kabir's mind, *(he thought:)* "of what use are kings and queens to me ?"

Kabir then covered himself with a from blanket and the queen arrived there.

11. She saw a tattered hut and seat of torn rags over which lay torn blankets.

12. There were no materials for worship, no gods or

goddesses, *(all there)* were engaged in the service of complete detachment *(sahaj samadhi)*.

There was no plate, pitcher, money or cloth, not even water enough for the next day.

13. When she saw the ordinary goods, then she repented in her mind and turned her back *(on the scene)*.

Where us go where the Camar Raidas is and see how he conducts himself.

14. She returned there very quickly *(lit. taking no time)* and saw the entire layout of Raidas' living quarters *(lit. high distant view)*.

Seeing the temple where gavinda sat permanently (always) she was happy.

15. High up sixty tent dwellings were taut set up the queen had *(never)* seen such happiness the pots and doors were made of gold, and the pots were filled with scented items.

16. Hand-held cymbals and a drum kept rhythm (tala), and there were flower farlands of many colors.

Then she saw the sage Raidas, and many great sages (mahant) (could) be seen near him.

17. Their beautiful bodies were clothed in white and pleasing (lit. cool) talk emerged from their mouths.

When her ego vanished, (then) she bowed down to all the saints (devotees).

DOHA

7. he touched the feet of Raidas, and he placed his hands on her forehead. In her mind the queen accepted that she had arrived *(become)* in the company of devotees.

Rest 8

1. She took initiation in secret so that at first no one knew this mystery.

Queen Jhali *(had)* come bringing great wealth, expending it all she returned home.

2. When she had gone *(lit. abandoned)* five kosas from the city, then the Brahmins go thered around for a quarrel.

   When priest *(purohit)* heart she had taken diksha *(mala)* the Brahmins were red-faced a with anger.

3. Anger grew in their minds like fire and taking stones they beat their foreheads.

   The queen grabbed the horse's reings and turning around went back to Kashi again.

4. The Brahmins, angry, cursed her *(saying)*, "your worship *(japa)* will be without fruit."

   One of the Brahmins beat the earth with his estrological book *(patra)* and another, removing his sacred thread, flung it to the ground *(lit...twisting his sacted thread he threw them)*.

5. Another sat roasting in the sun *(while)* another fell to *(no)* the earth.

   Another was vomiting blood fefore the queen *(while)* kesava pandey *(kesau pande)* bit his wrist.

6. Another was biting his tongue with his teeth *(shile)* others fore the clothes from their bodies.

   Another was chew the poison serum ceach carried as medicine *(while)* another went running towards the home of the king's minister *(divanai)*.

7. Another plunged a large knife into his stomach *(while)* another set fire to his clothes.

   Another poured *(gave)* his blood in the dsacred fire (ahut while another refused to drink water *(lit. did not take water while thirsty)*.

8. They were killing themselves at the door of god's devotee; hearing of this the king Bir Singh Bhagail *(Baghalau)* came running.

   An elephant without tusks *(makana)* was sent *(given)*

and Queen Jhali came, then she felt remorse in her mind.

9. Jhali spoke in the following manner time and again: "This time the lord *(Kesau)* should save me from this trouble.

   If in doing good some evil thing happens then Kesau has no control over it."

10. The whole city came for the spectacle and she first introduced herself.

    No work will be completed *(by)* beating or killing the *(said:)* "Listen !" And he stopped *(them)* forcefully *(nihayat)*.

11. My devotee of god *(Hari)* who is called Sain, he has come from Badhugarh.

    The Brahmins do not accept what he says and refusing *(to heed)* they are bent upon dying.

12. Raidas has a devotee sent who, running, went to seek Kabir's advice.

    (The devotee gave Kabir Raidas' message:) "The Brahmins will die at my dorrstep-tell me what I should do !"

13. Kabir replied: "Those who have eaten the king's alms will not accept any advise *(teachings)*. Even if Brahma suggestes something they would not accept it; they regard you and I as lower *(than themselves)*.

14. Entrust your salagram to the barber Sain, in this way you will rid yourself of them *(lit...detach your body)*.

    Throughout the ages the witness of the saints has been given *(spoken)*; do not fear-Hari will progect you."

15. Such was the instruction sent by Kabir which Raidas was very pleased with.

    The Brahmins will *(continue)* to throw up obstacles obstinately, they shall listen to no words of wisdom or meditation.

16. Then Raidas spoke: "O' brothers. Respect what is said by the lord *(Kesau)*.

Come and place your salagrams *(here)*. "this suggestion *(idea)* was accepted by all.

DOHA

8. All the quarreling *(immediately)* vanished, and the Sants began to worship (recollect) the lord. Please accept in your hearts that truth which the lord (bhagavant) has spoken i.e. the god within yourself.

Rest 9

1. All the disputes which had at first arisen *(between the Brahmins and Raidas)* were renewed by the former with even greater vigor.

They recited the Gayatri and Vedic mantras and kept up their lament for many *(lit. 6)* hours.

2. On the other side were the devotees of Hari, Sain and Raidas, they sang the praises of Hari tears streaming forth *(from their eyes)*.

The gods came mounted on their vehicles and their celestial attendants *(ganas and gandarvas)* filled the sky.

3. Having considered the salagram spoke: "Listen all you men and women !

aidas is a real and true devotee these fradulent Brahmins only oppress *(you)*."

4. The lord *(Kesau)* spoke three times in this manner, then the doubts of all *(present)* there vanished.

Cries/shouts of "Victory, victory" arose in the world, and all the withesses to this miraculous scene left to their homes.

5. The devotee obtained the victory for all times, and the celestial attendents *(ganas and gandarvas)*, having showered down flowers *(upon Raidas)*, were sent away.

The Brahmins set off as if defeated they went-know them *(to be like)* a man who begs from his own sister *(lit... who extends his hand to his sister)*.

The queen took initiation on the dewothan ekadashi.

7. A struggle ensued *(between the Brahmins and Raidas)* for four days until the full-moon night, *(then)* Queen Jhali left to her own. The evening of that same day Sain and Raidas came to Kabir.

8. Kabir, greeted them respectfully and seated them; *(he said:)* "I heard your news."

They began to express fellings of praise for one another and all the other devotees touched the feet of and bowed down *(bande) (to Sain and Raidas)*.

9. *(They shouted:)* "God *(Hari)* is true and his followers are true. By recollecting Hari all sorrow disappeared. After that they began singing *(doing)* kirtans; losing *(becoming)* all doubts they did not fear anyone.

10. At midnight they were absorbed in recollecting god, then the sleeping renunciants *(vairagi)* awoke.

When the four-armed god *(Vishnu)* gave darshan to the three devotees, then they lied down.

11. Rising up Raidas fell at Hari's feet; Sain said, "We take refuge in you."

Kabir, sitting, obtained his darshan and the god in his four- armed form entered into Kabir's heart.

12. To Kabir's mind the nirguna *(form)* was preferable and the ideas of all others ill-formed.

Realizing *(hearing)* this Raidas grew angry knowing nirguna and saguna to be the same.

13. Sain and Raidas propounded saguna *(bhakti while)* the desire of Kabir's mind was nirguna.

They debated philosophical matters for four hours *(during which)* Kabir's mind remained fixed in mediatation.

14. Resolute of mind, Kabir spoke of nirguna and become *(was established)* like a guru *(to sain and Raidas).*

Raidas and Sain bowed down *(bandana)* to him and they returned *(arrived)* at their own temples,

15. Nirguna and saguna are said to be one, no one should be obstinate in their *(own views).*

Nirguna Brahma is unmoving, the saguna god looks after his devotees in their homes.

Saguna bhakti should be understood *(said)* like butter, o' friends, *(while)* nirguna is like its essence ghi, which is extracted after being heated.

DOHA

9. No one can describe the qualities of god *(Hari)*, the gods *(Brahma ?)*, man *(Vyasa ?)* and thousand-headed serpent *(Shesh ?)* were defeated. Anantdas has considered this and taking *(catching)* refuge (in very fortunate.

Rest 10

1. Then Raidas fell into meditation upon the formless *(nirguna)*, and he was freed from the snare of deeds and ignorance.

He began to recall god in story and song, and the one from whom nothing is hidden *(lit, sees inside all)* awoke inside him.

2. *(Raidas thought:)* "Kabir has given me teachings like those of Sukhdev, Shiva *(Samkar)* and Sesh;" Raidas' mind attained that highest level *(of concentration)* from which his eyes could not see below.

3. After that Raidas meditated in a manner such that the idea of Queen Jhali came to him.

(Queen Jhali thought:) "When one's guru comes to the door, then he should be served properly.

4. His life has been squandered *(lost)* worthlessly at whose door the guru does not set foot."

Then Jhali asked the devotees: "What do you think of this idea of mine ?"

5. The devotees replied: This is a splendid idea what you suggest *(say)* we shall now arrange for *(lit. come bringing).*"

Jhali said, "Go and make this request *(of my guru)*: 'Give me your darshan knowing that I am yours !"

Adornments *(lit. eighteen ornaments ?)* and money quench one's desire *(hope ?), (but)* a shell's thirst is quenched only by the water in season."

**(swati: a short season of fifteen days whose water (rain) is said to be life producing to those creatures who imbibe it).*

7. Just as a mother nourishes her child, the true guru satisfies one's soul.

(Queen Jhali) had her request written down, the chief, the chief part of which she had a devotee memorize *(lit. taught to a devotee).*

8. The devotee set off without delay and arrived at the city of Kashi.

Seeing the Sants gathered around Raidas he met with him and bowed down.

9. Having met everone he handed over the letter and Raidas had it read.

The devotee transmitted *(said)* everything that had been said, *(namely)*, that the queen is anxious to take your drshan.

10. Then Raidas began to speak of going this information was passed to all the Sants.

All the Sants replied *(said)*: "*(When)* the lord *(bhagvan)* gives his permised, then arrangements *(jugati)* for going *(shall be made)* immediately."

11. Then Raidas thought: "My elder brother Kabir is like a guru *(to me).*

Thus, Raidas set out the next morning to ask his

opinion and reaching there Kabir greeted him respectfully and had him sit down.

12. Then Raidas told Kabir. "an invitation to visit Cittoor *(dal: see text)* has come for me. please give me your opinion which I shall follow: If you say so then I shall go; otherwise, I will refuse *(lit. give an answer).*"

13. Then Kabir *(spoke)* an opinoon such that the devotee of Hari *(Raidas)* accepted *(fixed)* it in his heart.

(Kabir told him:) "Go at the wish of Keshava *(Kesau)* and preserve the tradition of the saints."

Having requested the lord's permission Raidas returned *(came) (to Raghat),* and in the morning he spoke of his decision (idea) to go.

DOHA

10. Raidas took Kabir's suggestion which th lord (Hari) seconded. Then Raidas made up his mind to go to cittoor.

Rest 11

1. In the morning Raidas set off taking all his friends and companinons with him."

Possessed of good character and understanding, these loyal Sants set off *(with him).*

2. Their minds fixed in meditation, wisdom and abstract contemplation, all reflected upon the Uncreated Idea *(anabhayasabad).*

Such disciples adorn any company, even the gods are charmed by them much less men.

3. Wherever th followers of hari went, all who took their darshan foun happiness.

they sang *(did)* kiratans to Krishna and other devotional lyrics, by their love they captured the hearts of everyone.

4. At whosever door the devotees of Hari set foot, those persons were liberated from all their sins.

To whom could the followers of Hari not be pleasing with their boundless enthusiasm and ever increasing love.

5. Traveling thus many days passed; Queen Jhali watched the path anxiously.

When they drew near to Cittor, then Raidas dispatched two messengers *(disciples).*

6. Having arrived *(gone)* the two disciples delivered their message and the queen grew very agitated.

Blessed is this day, hour and home *(because of)* the message they came and delivered.

7. Then Raidas drew closer and at first set up camp in the garden. The queen summoned all her ministers to her presence and dispatched them to the capital.

8. All the people and important men began to come to take darshan of Raidas; hearing of this the Brahmins felt jealousy *(remorse).* The hearts of everyone were filled with bliss but the Brahmins, despairing, burned with jealousy *(lit. died by burning).*

9. The queen arrived bringing every offering: betel, fragrances, red powder and sweets.

Cries of "Hari, Hari" rent the air *(lit. became)* and that garden became like the heaven of Vaikunth.

10. All kinds of religious stories were told and songs sung: prasad was divided and distributed to all.

"Please consider establishing your camp in the city and gracting it there by."

11. (The guru's glory grew ever greater; all the groups of people set off to their homes.

A silken carpt was brought and sprcad out upon which in guru set his feet which were washed *(by others).*

DOHA

11. The greatness of the guru and Govinda surpasses whatever can be said or shown concerning it. (Even if a disciple) offered his head this cannot repay the debt owed to the guru; thus's splendor is greater than whatever is spoken of it.

Rest 12

1. Thus the queen displayed great enthusiaism after which she settled upon holding a feast.

   All the Brahmins met and hatched plot to spoil the queen's efforts.

2. *(They thought:)* "Having called this Sudra the queen is showing him hospitality and has abandoned her own priests."

   Where is the person who can bring to ruin of him whom Rama supports *(adorns)* ?

3. All the brahmins went to the court and arriving there threatened the queen angrily.

   The queen said: "Why are you so distrautht ? as if your land and fields had been stolen."

4. The Brahmins replied: "You have ruined everything having arranged for a feast in the capital.

   All kings honor *(accept)* Brahmins and show *(know)* no respect for others.

5. If you had wished to do something meritorious, then you should have informed us first.

   He who performs a sacrifice desires Brahmins after whom all others come after.

6. Everywhere Brahmins possess authority, you made this base camar your Guru."

   The queen said, "Listen O' friends ! To my mind this was good.

7. One is a Sudra who performs bad deeds, he who does good deeds is great.

Good and bad are a matter of one's actions *(lit... in one's work)*. one's physical body is not of importance.

8. Desire, greed, anger, *(etc.)* are the nine doors, in the body these are base things *(lit. Camars)*.

   Great is he who is victorious over these; was Valmiki a Brahmin ?

9. Caste and kinship carry no weight he is the beloved of Ram who worship him.

   You understand nothing *(lit. Your essence/gist is nothing...)* ! Rise up and get out of here you Brahmins.

10. The Brahmins were *(found)* very sad at heart, growing angry they threatened the queen: "First give us food- afterwards as you wish so it shall be."

11. The queen said : "You have no patience; Why should I give to You *(When)* the guru comes first ?"

    In this manner a great ensued; then Raidas sent a disciple.

12. *(Raidas' message to the queen:)* "To me there is neither victory nor defeat; preserve the rights *(ras riti ?)* of these Brahmins."

    Regarding his words as an order the queen accepted them; thus she will have the food served annoyedly *(?)*.

13. Indifferent. She had the Brahmins summoned; they all rose up and ran towards the city.

    For taking food the Brahmins ran; seven hundred of them could be counted.

14. The Brahmins thought to themselves: "We shall prepare food the whole day.

    No one shall manage to come before up *(?)*; "thus, they requested a new earthen pot.

15. They bathed without concern for time while the devotees of Hari sat singing of his qualities.

    When the food was ready the revomed their turbans and exposed their heads in order to begin eating.

16. All the Brahmins were happy; they were unaware of their unfolding fate.

Then Raidas entered in to meditation, Fixed in which he left his body.

17. What is not possible to the Creator-he se took away the prestige of all the Brahmins.

Having left his body Sant Raidas was in all places, his image *(Shadow)* appeared again and again.

18. He sat in the company of all the brahmins eating: he was seen near each and every one of them.

To all there this seemed a miraculous spectacle: there were as many Raidas' as Brahmins there.

19. Then one person ran to Raidas' camp and found him there.

"Increadible, marvelous" all were saying while the brahmins hid their faces.

20. All of the Brahmins felt shame- to torture a saint is dangerous *(kaja ?)*.

(They thought:) If Raidas becomes angry with us, then se shall all be consigned to the flames *(lit.. will burn)*.

21. We are *(like)* criminals and he is perfect; god is always in his presence."

God is trut and the followers of god are true-the Brahmins *(too)* grasped this faith *(pratiti ?)*.

DOHA

12. God is great - god is marvelous, and you his servant are great. Caste, kin and family are nothing; the Brahmins Fell into despair.

Rest 13

1. All the Brahmins met again and thought of a remedy *(device)*: "We shall go and touch Raidas" Feet".

All of them left without delay: having requested queen Jhali they took her company.

2. *(They Thouth;)* "How can we take hold of Raidas' feet ? -there are many faultsd within us."

They prostrated themselves from their homes to his comp; with fear in their hearts they came.

3. Then the humble Raidas spoke: "You Brahmins are elevated while I am low and mean.

How can You prostrate Yourselves thus-are you not dying of shame ?"

4. The Brahmins, *(utterly)* defeated, were left speechless; to all present this was an event of great delight.

The king and his subjects all came. They too were pleased at Raidas causing the Brahmins discomfort *(lit... hsi doing dislike : nindya ?)*.

5. "But how shall we cross over *(the world of samsara)* ?, "thus did the Brahmins beseech Raidas.

Then Raidas spoke and recited the story of his previous birth.

6. "I was a Brahmin but did not know god (hari); thus, having been made a Sudrs I was born *(came)*."

And he took out his sacred thread of gold from within, and seeing this everyone swooned *(in amazement)*.

7. *(Raidas continued;)* "Practiching devotion I was righted : Without the love of god the world is base.

There is no authority in caste and kin, he who practices devotion crosses over the world.

8. The vedas, Puranas all speak these things, that, god *(Vishnu)* lives is devotion.

His life is a success who speaks with god *(Hari)* in his Heart; the glory of god's rememberance is above all things.

9. In this way did Sant Raidas speak, and his words took root *(lived)* in everyone's heart.

The brahmins said, "You are our guru; *(touching)* your feet we shall be liberated.

10. Please place *(give)* Your hand upon our heads O'

Master; You know the hearts *(of all) (lit. you know inside)*- we are your followers."

Then Raidas made all of them his desciples; showing his kindness he placed *(gave)* his hand on their heads.

11. The king, people and all there were *(found)* joyful; shouting cries of 'Victory, victory' awave of love spread *(amongst them)*.

There is no difference between god *(bhagavant)* and the devotee; he who percives other wise will burn !

12. God and the devotee are consicered as one, he who understands this crosses over to the other side.

Anantdas spoke in the language of the people *(prakrit)* in which he put the secrets of devotion.

13. Twenty times did I speak the words of the guru *(Sakhi)*: Witness, need to reference this), then I told th life histories of the saints.

Not one letter of this is corrupt; good persons know and bad persons are angry.

14. *(Even if)* a million supreme sages *(muni)* sang *(of the qualities of gods)* could their million tongues manage *(to express ?)* Singing of god's sublime qualities night and day, even then they could not discern *(find)* the ways of the creator.

A drop is swallowed up in the divine ocean- who knows where is disappeears to ?

DOHA

13. No one can describe the qualities of go *(Hari)*, the gods, men and the thousand headed serpent were all defeated. Anantdas says *(thinks)*: "To even touched his feet is a great blessing"

•

भक्तमाल से उद्धृत

मेरेधनरामकछूपाथर न सरैकामदाममेंचाहौचाहौडारौ तनवारिकै । राईएकसोनौकियोदियोकरिकृपाराखोराख्योवह छानि मांछलेहुगोनिकारिकै ॥२५६॥ आयेफिरिश्याममासतेरहव्यती तभयेप्रीतिकरिबोलेकहौपारसोकीरीतिको । वाहीठौरलीजैमेरोम ननपतीजैअब चाहौसोईकीजैमैंतौपावतहौंभीतिको । लैकैउठिग-येनयेकौतुकसो सुनोपावैसेवतमुहरपांचनितही- प्रतीतिको । सेवाहू करतडरलाग्योनिशिकहेउहरि छांड़ौअरआपनी औराखोमेरीजीति को ॥२६०॥

याते हरि भक्तिही बडीहै किये शिष्य ॥ श्लोक ॥ अंत्यजाअपि तद्राष्ट्रे शंखचक्रांकधारिणः ॥ सुधिआवै राजा इंद्रद्युम्नअगस्तस्रा-पगजमयेकियोबहुमान ॥ पद ॥ आजुके दिवसकी जाहुँ बलिहार । मेरेगृह आया राजारामजीका प्यार । करों दंडवत चरण पखारों । तन मन धन संतनि परवारों । आंगन भवन भयो अतिपावन । हरिजन बैठे हरियश गावन । कहैं कथा अरु अर्थ विचारें । आप तरैं औरनिको तारें । कहै रैदास मिले हरिदासा । जनम जनम की पूजी आसा ॥१॥ पाथर न सरै काम पारसतौ सोई जो पार उतारै सोतौ एक रामनाम है ॥२॥ डरलाग्यो ॥ श्लोक ॥ स्तेयं हिंसानृतं दंभः कामः क्रोधः स्मयो मदः । मदोवै रमविश्वासः संस्पर्द्धा व्यसनानिच । एतेपंचदशानर्था-ह्यर्थमूलामता नृणाम् । तस्मादनर्थमर्थाख्यं श्रेयोर्थी दूरतस्त्यजेत् ॥५॥ चौपाई ॥ कैमाया कैहरिगुण गाई । दोनो सेती दीनों जाई ॥६॥ श्लोक ॥ विषयाविष्टचित्तानां विष्ण्वावेशः सुदूरतः । वारुणीदिग्गतं वस्तु व्रजन्नैंद्रींकिमाप्नुयात् ॥७॥

मानिलईबातनईठौरलैबनाइचाइसंतनिबसाइहरिमंदिरचिनायो

है विविधवितानतानगनौजोप्रमानहोई भोईभक्तिगईपुरीजगयश-छायो है दरशनआवैलोगनानाविधिरागभोगरोगभयोविप्रनकेतन-सबछायोहै । बड़ेईखिलारीवेरहेहीछानिडारिकरी घरपैअटारी-फेरिद्विजनसिखायो है ॥२६१॥ प्रीतिरसराशिसोरैदासहरिसेवत है घरमेंदुराइलोकरंज नादिटारीहै । प्रेरिदियेहृदयजाइद्विजन-पुकारकरीभरीसभानृपआगै कहेउमुखगारीहै । जनकोबुलाइ-समुझाइन्याइप्रभुसौंपिकीनो जगय शसाधुलीलामनुहारी है । जितेप्रतिकूलमैंतौमानेअनुकूलयातेसंत नप्रभावमनिकोटरीकीतारी है ॥२६२॥

लोक रंजनादि टारिये ॥४॥ सवैया ॥ हमसों मनमोहनसों हितहै चुगली करि कोऊ कहा करि है । अबतो बजिके बदनामी भई गुरु लोगनिकेजु कहा डरि है । कबि धीर कहै अटकी छबिसों ब्रजमे भटकी बिसरयों घरहै । तुमको यह बातसों कामकहा अपने कोउ जान कुँवा परिहै ॥१॥ मुखगारीहै ॥ पुष्करमाहात्म्य ॥ अपूज्या यत्र पूज्यं ते पूज्यपूजाव्यतिक्रमः ।। तत्र तत्र प्रवर्त्तन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयम् ॥२॥ न्याई प्रभुसोपि ॥ छन्द ॥ सदा कृपानिधान हौ कहा कहौं सुजानहौ अमान हान मानहौ समान काहि दीजिये । रसाल प्रीतिके भरे खरे प्रतीतिके निकेत रीति नीतिके समुद्र देखि देखि जीजिये । टीकी लगी तिहारियेइ सुआइयो निहारिये लोक रंजनादि टारिये समीप यों बिहारिये । उमंग रंग भीजिये पयोदमोददाइये बिनोदको बढाइये बिलंब छांडि आइ ये । किधौं बुलाइ लीजिये ॥३॥ तारीहै ॥ दोहा ॥

पद ॥ आयो आयो हौ देवाधि तुम शरण आयो । सकल सुखकी मूल जाकी नाहिं समतूल सो चरण मूल पायो । लियो बिबिध जौन बास यमकी अगम त्रास तुम्हरे भजन बिन भ्रमत फिर्‌यौ ॥ माया मोह बिषय रस लंपट यह दुस्तर दूर तर्‌यौ । तुम्हरे नाम बिश्वास छांडिये आन आस संसारी धर्म मेरो मन न धीजै । रैदास दास की सेवा मानहुं देवा पतितपावन नाम आजु प्रगट कीजै ॥१॥

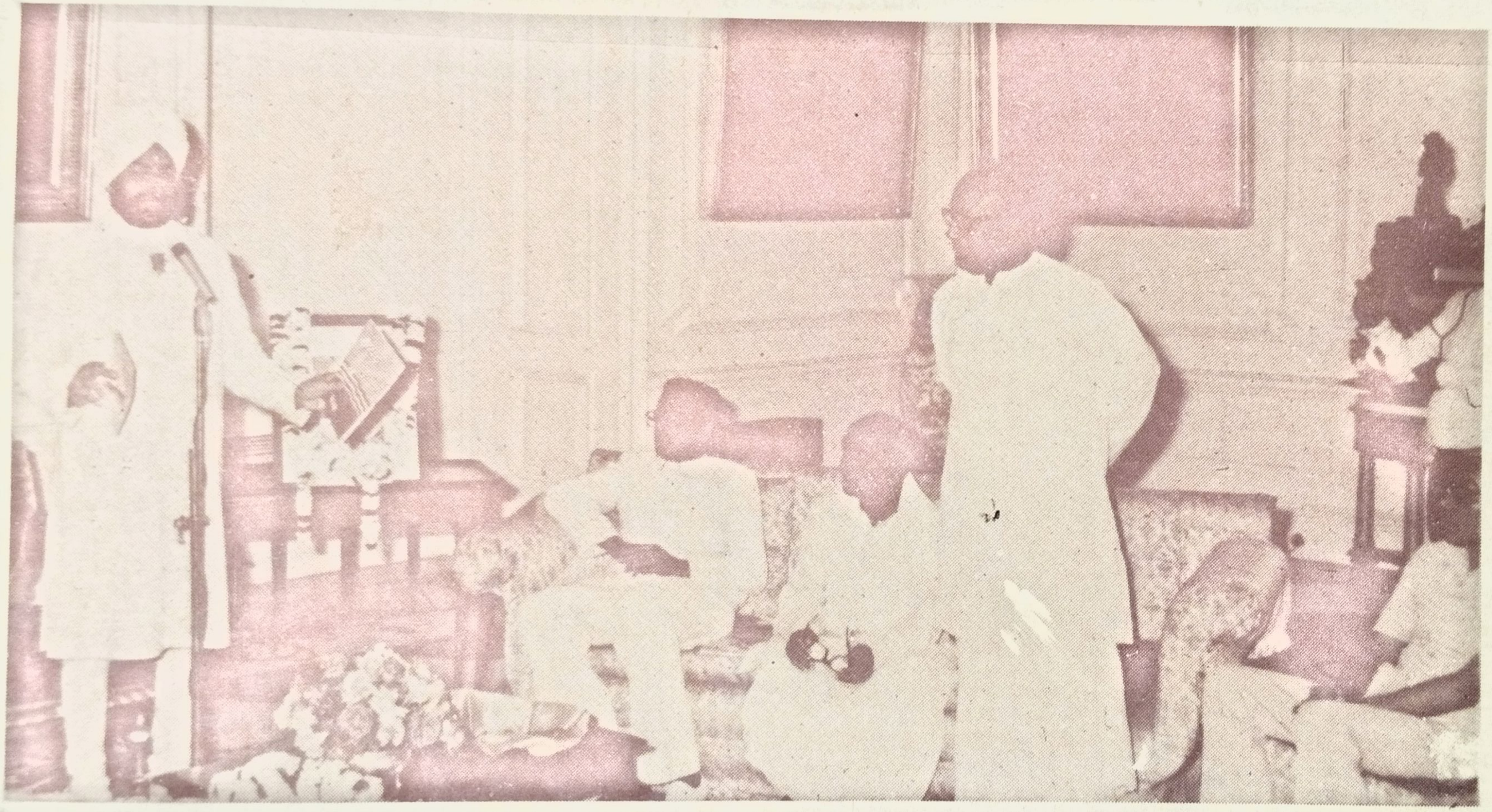

'रैदास' पत्रिका का उद्‌घाटन करते हुए राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह, राष्ट्रपति भवन ।

मूल्य २५ रुपया